बहाउल्लाह

स्वर्गिक रहस्यों

के

रत्न

(जवाहिरूल-असरार)

परिचय

इराक़ में बहाउल्लाह के निष्कासन के पूरे एक दशक का दौर कठिनतम परिस्थितियों में आरम्भ हुआ था - एक ऐसा समय जब बाबी धर्म का भाग्य भी पतन के कालचक्र में पिस रहा था। लेकिन यही था वह कालखंड जब धीरे-धीरे वे महान आध्यात्मिक शक्तियाँ भी स्फटिक की तरह निखरती हुई अपना आकार ग्रहण कर रही थीं जिनकी चरम परिणति सन् 1863 में बहाउल्लाह के विश्वव्यापी मिशन की घोषणा के रूप में हुई थी। जैसाकि शोगी एफेन्दी ने लिखा है, ‘‘इन वर्षों के दौरान बगदाद नगर से प्रकाश की एक से बढ़कर एक तरंगें उठीं, ऐसी शक्ति और प्रखर गरिमा की लहरें हिल्लोलित हो उठीं जिन्होंने अनजाने में ही एक मुरझाते हुए, बुरी तरह आहत, गुमनामी के अंधेरे में गोते खाते हुए, चुनौतियों से घिरे और विस्मृति की कगार पर खड़े धर्म को नवजीवन से भर दिया। यहीं से रात-दिन, नियमित बढ़ती ऊर्जा के साथ, उस धर्म प्रकटीकरण की प्रथम किरणें विकीर्ण हुईं जो कि अपने दायरे, अपनी विशालता और प्रेरक-शक्ति तथा अपने साहित्य की विविधता और विशदता के दम पर स्वयं दिव्यात्मा बाब के धर्म से भी अधिक उत्कृष्ट स्वरूप ग्रहण करने वाला था।’’[1]

सर्वमहिमामय की लेखनी के आरम्भिक प्रस्फुटनों में से एक है अरबी भाषा में लिखा गया एक लम्बा पत्र जिसे जवाहिरूल असरार (जवाहर-उल-असरार) के नाम से जाना गया, जिसका शाब्दिक अर्थ है ‘‘रहस्यों के रत्न’’ या ‘‘सार-तत्व’’। इसमें प्रतिपादित कई विषयों पर, एक अलग प्रकार की प्राकट्य-शैली के माध्यम से, फारसी भाषा में भी प्रकाश डाला गया है -‘‘सात घाटियाँ’’ (सेवन वैलीज) एवं ‘‘निश्चय की पुस्तक’’ (बुक ऑफ सर्टिट्यूड) में जिन्हें शोगी एफेन्दी ने क्रमशः बहाउल्लाह की महानतम रहस्यवादी रचना तथा उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक कृति कहा है। निस्संदेह, स्वर्गिक रहस्यों के रत्न ‘‘अरबी भाषा में प्रकटित पातियों’’ के अंतर्गत है जिसका सम्बंध ‘सर्वाधिक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक कृति’ वाले खंड से है।[2]

जैसाकि बहाउल्लाह ने संकेत दिया है, इस पुस्तक की एक मुख्य विषयवस्तु है ‘रूपांतरण’ जिसका अर्थ इस संदर्भ में एक अलग मानव रूप में ‘प्रतिज्ञापित अवतार’ की वापसी से है।

मूल पांडुलिपि की आरम्भिक पंक्तियों के ऊपर लिखे एक परिचयात्मक नोट में बहाउल्लाह ने कहा है:

यह मीमांसा एक साधक के प्रश्न के उत्तर में लिखी गई थी जिसने यह पूछा था कि प्रतिज्ञापित मेहदी भला किस प्रकार अली मुहम्मद (दिव्यात्मा बाब) में रूपांतरित हुए होंगे। इस प्रश्न ने जो अवसर उपस्थित किया उसका लाभ उठाते हुए कई विषयों पर व्यापक प्रकाश डाला गया। ये सभी विषय उन दोनों ही किस्म के लोगों के लिए उपयोगी हैं - जो साधक हैं और जो अपनी साधना के चरम पर पहुँच चुके हैं, बशर्ते कि तुम स्वर्गिक सच्चरित्रता के नेत्रों से निहार सको।

उपरोक्त अनुच्छेद में जिस 'साधक' की ओर संकेत दिया गया है वे थे सैयद युसुफ-ए-सिहदिही-इस्फहानी जो उस समय कर्बला में रह रहे थे। उनका प्रश्न बहाउल्लाह के समक्ष एक मध्यस्थ व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत किया गया था और यह पाती उसके प्रत्युत्तर में उसी दिन प्रकट कर दी गई थी।

इस रचना में कई अन्य महत्वपूर्ण विषय-वस्तुओं पर भी प्रकाश डाला गया है: जैसे, बीते युगों में अवतारों को क्यों अस्वीकार कर दिया गया था, पवित्र पाठों के केवल प्रकट शब्दों को पढ़ने से उत्पन्न होने वाले खतरे, बाइबिल में धर्मावतार के प्रकटीकरण से जुड़े संकेतों और अभिलक्षणों के अर्थ, धर्म का प्रगतिशील प्रकटीकरण, शीघ्र ही स्वयं बहाउल्लाह द्वारा जो घोषणा की जाने वाली थी उसका पूर्व संकेत, "निर्णय-दिवस", "पुनरुत्थान", "दिव्य उपस्थिति के समक्ष प्रस्तुत होना" तथा "जीवन और मृत्यु" जैसी सांकेतिक शब्दावलियों का महत्व एवं "खोज के उद्यान", "प्रेम और परमानंद की नगरी", "दिव्य एकता के नगर", "आश्चर्य की वाटिका", "परम शून्यता का नगर", "अमरता की नगरी" तथा "अनाम एवं अवर्णनीय नगर" के माध्यम से गुज़रते हुए आध्यात्मिक साधना के चरण।

"स्वर्गिक रहस्यों के रत्न": इसका प्रकाशन अप्रैल 2001 में घोषित पाँच वर्षीय योजना के एक लक्ष्य "पवित्र पाठों के अंग्रेजी अनुवाद का समृद्धिकरण" की पूर्ति से सम्बन्धित प्रायोजन है। यह खंड एक अपार क्षमता-सम्पन्न अवधि के बारे में पश्चिमी पाठकों के ज्ञान को और अधिक गहन बनाएगा, जिस अवधि का वर्णन शोगी एफेन्दी ने "बहाउल्लाह के प्रभावशाली युग के बासन्ती वर्ष" के रूप में किया है।

स्वर्गिक रहस्यों के रत्न

आत्मा के उन्नयन की यात्रा में उन लोगों के लिए सुनिर्धारित दिव्य रहस्यों के सार तत्व जो परम षक्तिमान, सदा क्षमाषील परमेष्वर की निकटता पाने को लालायित हैं - धन्य हैं वे सदाचारी जो इन स्फटिक स्वच्छ निर्झरों के जल का आस्वादन ग्रहण करते हैं!

अति उदात्त है वह, परम महान!

1. हे न्याय पथ के अनुगामी और दया की मुखमुद्रा की ओर निहारने वाले! तुम्हारा पत्र हमें हस्तगत हुआ है, तुम्हारे प्रश्न पर ध्यान दिया गया है और तुम्हारे हृदय के अभ्यंतर से निकले तुम्हारी आत्मा के मधुर उच्चारण सुने हैं हमने। तभी तो तुम्हारे ऊपर स्वर्गिक प्रज्ञा की बरखा बरसाने के लिए, 'दिव्य इच्छा' के बादलों को उमड़ने दिया गया है, कि तुम्हें तुम्हारे पिछले सभी ज्ञानों से मुक्त किया जा सके, तुम्हें विरोधाभासों की दुनिया से खींचकर एकता के आश्रय की ओर लाया जा सके और तुम्हें परमात्मा के विधानों की पावन जलधाराओं की राह दिखलाई जा सके ताकि तू कदाचित उन जलधाराओं को छक सके, विश्रांति पा सके, अपनी प्यास बुझा सके, आत्मा को नवजीवन से भर सके और तेरी गिनती उन लोगों में हो सके जिन्हें इस युग में ईश्वर के प्रकाश ने सही मार्ग दिखलाया है।

2. यही वह समय है जब मैं इस धरती के श्वानों और हर भूभाग के वन्य जन्तुओं से घिरा हुआ हूँ। छिपा हुआ हूँ मैं स्वयं अपने ही अस्तित्व के निगूढ़ अधिवास में। ईश्वर ने मुझे अपने जिस विलक्षण ज्ञान, जिन प्रज्ञा-रत्नों और अपनी सम्प्रभुता के जिन प्रतीकों से सम्पन्न किया है उन्हें प्रकट करने से निषिद्ध कर दिया गया है मुझे। मगर फिर भी मुझे यह पसन्द नहीं कि मैं उन लोगों की आशाओं पर तुषारापात करूँ जिन्होंने परम महिमा के अभय-स्थल की ओर अपने कदम बढ़ाए हैं, जिन्होंने अनन्तता की पवित्र परिधि में प्रवेश पाना चाहा है और दिव्य निर्णय के इस अरुणोदय काल में सृष्टि के विस्तृत वितान में उड़ान भरने की अभिलाषा की है। इसलिए मैं तुम्हारे समक्ष यथार्थ के कुछ रहस्यों को प्रकट करूँगा जिन्हें ईश्वर ने मुझे प्रदान किया है - वो भी उसी अनुपात में जिस अनुपात में कोई आत्मा उन तत्वों को जान सके, मस्तिष्क जितना समझ सके, ताकि दुष्ट लोग कोलाहल न करने लगें और एकता के दुश्मन अपने परचम फहराने न उठ जाएँ। ईश्वर से मेरी याचना है कि वे इस कार्य में मेरी सहायता करें क्योंकि जो कोई भी उससे याचना करता है उसके लिए वह परम कृपालु है। दया दर्शाने वाले सभी लोगों में परम दयावान है वह।

3. समझ लो कि तुम्हारे लिए युक्तिसंगत यह होगा कि सबसे पहले तुम इन सवालों पर विचार करो: ईश्वर ने अपनी शक्ति और सामर्थ्य से जिन दूतों या अवतारों को इस धरती पर भेजा था, उन लोगों को जिन्हें परमेश्वर ने अपने धर्म को ऊपर उठाने के लिए और अपनी एकता के आले में अनन्तता के दीपक के रूप में रचा था उन्हें

संसार के विभिन्न लोगों ने भला क्योंकर खारिज कर दिया ? लोग भला क्यों उनकी ओर से मुँह मोड़कर चल दिए, उन्हें लेकर विवाद खड़े किए, उनके विरूद्ध खड़े हुए और संघर्ष ठान दिया ? आखिर किस आधार पर वे उनके अवतार पद और प्राधिकार को मानने से इंकार कर बैठे, इतना ही नहीं उनके सत्य को अस्वीकार किया, उन पर व्यक्तिगत लांछन लगाए, यहाँ तक कि उन्हें जान से मार डाला और निर्वासित कर दिया, आखिर क्यों ?

4. हे ज्ञान के बियावान में पदार्पण करने वाले और विवेक के मेहराब तले बसेरा बनाने वाले! जब तक तुम उन तत्वों में प्रकटित रहस्यों को नहीं जान लेते जिन्हें हम तुम्हारे सामने प्रकट करने वाले हैं तब तक तुम निष्ठा के उदात्त पदों और ईश्वरीय धर्मं में तथा उनमें जो उसके धर्म के प्रकटित अवतार हैं, उसकी आज्ञा के दिवास्रोतों और उसके ज्ञान के कोषालयों में स्थित प्रज्ञता प्राप्त करने की आशा नहीं कर सकते। यदि तुम इसमें चूक गए तो तुम्हारी गिनती उन लोगों में की जाएगी जिन्होंने ईश्वर के धर्म के निमित्ति कोई भी प्रयास नहीं किया, न ही जिन्होंने निश्चय के परिधान से निष्ठा की सुरभि ग्रहण की, न दिव्य एकता की ऊँचाइयों तक उड़ान भरी और न ही जो स्तुति के साक्षात स्वरूपों और पावनता के सार तत्वों की परिधि में दिव्य एकता के महान पदों की पहचान कर सके।

5. अतः, हे मेरे बंधु! इस विषय को समझने की चेष्टा कर ताकि तुम्हारे हृदय रूपी मुखड़े के सामने पड़े आवरण को हटाया जा सके और तुम्हारी गिनती उन लोगों में की जा सके जिन्हें ईश्वर ने ऐसी भेदक दृष्टि प्रदान की है कि वह उसके साम्राज्य के सूक्ष्मतम यथार्थ को पहचान सके, उसके अधिराज्य के रहस्यों की गहराई माप सके, इस नाशवान संसार में उसके परातीत सारतत्व के संकेतों को पहचान सके और ऐसी महानता को प्राप्त कर सके जहाँ कोई उसके रचित जीवों के बीच विभेद और स्वर्गों तथा धरती की सृष्टि में तनिक भी दोष नहीं देख पाता।[3]

6. अब जबकि यह वार्ता इस उदात्त और जटिल विषय तक आ पहुँची है और इसने इस परम अभेद्य रहस्य का स्पर्श कर लिया है, तो यह जान लो कि ईसाई और यहूदी लोग ईश्वरीय वाणी के अभिप्राय को और ईश्वर द्वारा उनके प्रति दिए गए वचन को नहीं समझ सके हैं और यही कारण है कि उन्होंने प्रभु के धर्म को अस्वीकार कर दिया है, उसके अवतारों से विमुख होकर उसके प्रमाणों को नकार दिया है। यदि उन्होंने ईश्वर के साक्षात प्रमाणों पर अपनी दृष्टि केन्द्रित की होती,

निकृष्ट नेताओं और धर्मगुरुओं का अनुगमन न किया होता तो निस्संदेह वे मार्गदर्शन के आगार और सच्चरित्रता के कोषालय को प्राप्त कर चुके होते और सर्वदयामय की नगरी में, सर्वमहिमामय के उद्यान में तथा उस परमेश्वर के स्वर्ग के गहनतम यथार्थ की परिधि में अनन्त जीवन के स्फटिक स्वच्छ जल का पान कर चुके होते। मगर उन्होंने ईश्वर-प्रदत्त आँखों से देखना अस्वीकार कर दिया और ऐसी वस्तुओं की कामना की जो उन वस्तुओं से परे थी जिसकी कामना उनके लिए उस दयालु प्रभु ने की थी। वे प्रभु-सान्निध्य के विश्राम-स्थल से बहुत दूर भटक गये हैं, वे उससे पुनर्मिलन के जीवन्त जल और उसकी करुणा के स्रोत से वंचित हैं, और अपने ही अहं के कफन तले वे मृतप्राय पड़े हैं।

7. ईश्वर की शक्ति और सामर्थ्य के बल पर अब मैं प्राचीन ग्रंथों में प्रकटित कुछ श्लोकों का रहस्य प्रकट करूँगा और ईश्वर के चुने हुए व्यक्तियों में उसके प्रकटावतार के रूप में आविर्भाव लेने की पूर्वघोषणा से सम्बंधित कतिपय संकेतों का उल्लेख करूँगा, ताकि तुम इस अनन्त प्रभात के दिवास्रोत को पहचान सको और उस 'अग्नि' को निहार सको जो उस 'तरुवर' पर प्रज्वलित है जो न तो पूर्व का है और न पश्चिम का।[4] इससे कदाचित अपने प्रभु का सान्निध्य पाने के लिए तुम्हारी आँखें खुल जाएँ और तुम्हारा हृदय इन निगूढ़ खजानों में निहित वरदानों को ग्रहण कर सके। अतः, धन्यवाद कर परमेश्वर का कि उसने तुम्हें इस करुणा के लिए चुना है और तुम्हारी गिनती उन लोगों में की है जिन्हें निश्चय ही अपने प्रभु से मिलन का सौभाग्य प्राप्त होगा।

8. यह उस पवित्र पाठ का अंश है जिसे पहले के समय में उस प्रभुदूत के अपरिहार्य पूर्व संकेतों के बारे में जो 'उस प्रभु के बाद आएगा' मैथ्यू के अनुसार प्रथम 'गॉस्पेल' में प्रकट किया गया था। उसने कहा है: "और दुर्भाग्य हो उनका जो पुत्रवान हों और जो उस युग में उन्हें दुग्धपान कराएँ..... "[5], जब तक कि अनन्तता के परम मध्य में गायन करने वाला दिव्य 'कपोत' और दिव्य कल्पवृक्ष पर कलरव करता अलौकिक 'खग' यह न कह उठे: "उन दिनों के अत्याचार के तुरन्त बाद सूर्य अंधकारमय हो जाएगा और चन्द्रमा भी अपना प्रकाश नहीं बिखेरेगा और तारे आकाश मंडल से गिर पड़ेंगे और आकाश की शक्तियाँ कम्पायमान हो उठेंगी। तब कहीं स्वर्ग में 'मनुपुत्र' के संकेत प्रकट होंगे और तब कहीं धरती की सभी प्रजातियाँ विलाप कर उठेंगी और वे देखेंगी 'मानव पुत्र' को आकाश के बादलों की छाया में शक्ति और

अपार महिमा के साथ अवतरित होते हुए वह तुरही के तुमुल घोष के साथ अपने देवदूतों को भेजेगा।"[6]

9. मार्क के अनुसार, दूसरे 'गॉस्पेल' में पवित्रता का कपोत इन शब्दों में अपनी वाणी गुंजरित करता है: "क्योंकि उन दिनों में एक ऐसा कष्ट आ घेरेगा जैसा कि ईश्वर द्वारा सृजित सृष्टि के आरम्भ से ही कभी देखने को न मिला होगा और न आगे कभी अनुभव में आएगा"।[7] और पहले की ही तरह वह बाद में भी अपने उसी मधुर आलाप में गा उठता है और उसके स्वर में तनिक भी परिवर्तन, ज़रा भी अन्तर नहीं। सत्य ही, परमेश्वर मेरे शब्दों की सत्यता का साक्षी है।

10. और ल्यूक के अनुसार, तीसरे 'गॉस्पेल' में कहा गया है: "(उस दिन) सूर्य, चन्द्रमा और तारों में संकेत प्रकट होंगे और धरती पर राष्ट्र स्वयं को संकट और ऊहापोह की स्थिति में पाएँगे, समुद्र और उनकी लहरें तरंगित हो उठेंगी और स्वर्ग की शक्तियाँ कम्पायमान हो उठेंगी और तब वे देखेंगी 'मानव पुत्र' को स्वर्गिक बादलों की छाया में शक्ति और अपार महिमा के साथ अवतरित होते हुए और जब ये बातें घटित होने लगेंगी तब जान लेना कि ईश्वर का साम्राज्य अब निकट ही है।"[8]

11. और जॉन के अनुसार, चौथे 'गॉस्पेल' में कहा गया है: "किन्तु जब उस 'सुखदायक' का पदार्पण होगा, जिसे मैं तुम्हारे पास अपने पिता की ओर से भेजूँगा, तो यहाँ तक कि 'पिता' से उत्पन्न वह सत्य की 'चेतना' भी मेरा साक्षी होगा और तुम इस बात के गवाह बनोगे।"[9] और एक अन्य जगह पर उसने कहा है: "किन्तु वह 'सुखदायक' जो कि पवित्र आत्मा है, जिसे मेरे पिता मेरे नाम से भेजेंगे, वह तुम्हें हर बात सिखाएगा और उस हर वस्तु का स्मरण दिलाएगा जो मैंने तुमसे कही है।"[10] "लेकिन अब मैं उसके पास जा रहा हूँ जिसने मुझे यहाँ भेजा है, मगर तुममें से कोई भी मुझसे यह नहीं पूछ रहा है कि तुम कहाँ जा रहे हो? किन्तु चूँकि मैंने तुझसे ये बातें कही हैं।"[11]..... और फिर उसके बाद: "मगर मैं तुमसे सच कहता हूँ : मेरा जाना तुम्हारे ही कल्याण के लिए है, क्योंकि यदि मैं नहीं गया तो वह 'सुखदायक' भी तुम्हारे पास नहीं आएगा, लेकिन मैं स्वयं प्रस्थान करने के बाद उसे तुम्हारे पास भेजूँगा।"[12] और पुनः "परन्तु जब उस 'सत्य की चेतना' का अवतरण होगा तो वह

सर्वसत्य की दिशा में तुम्हारा मार्गदर्शन करेगा: क्योंकि वह स्वयं अपनी बात नहीं कहेगा, बल्कि वह, वह कहेगा जो वह सुनेगा और वह तुम्हें आने वाले यथार्थ का दिग्दर्शन कराएगा।"[13]

12. तो अतीतकाल में पवित्र श्लोकों में इसी तरह के पाठ प्रकट किए गए हैं। सौगन्ध उसकी जिसके सिवा अन्य कोई परमेश्वर नहीं! मैंने संक्षिप्तता का वरण किया है, क्योंकि यदि मैं परमेश्वर की परमोच्च महिमा की परिधि और उसकी सार्वभौम प्रभुता के साम्राज्य की उच्चता से प्रभुदूतों पर प्रकट किए गए समस्त शब्दों का वर्णन करने लगूँ तो मेरी विषयवस्तु के प्रतिपादन के लिए दुनिया के सभी पन्ने और समस्त पातियाँ भी पूरी नहीं पड़ेंगी। अतीत के सभी धर्मग्रंथों और पावन पुस्तकों में उपरोक्त संदर्भों जैसे अन्य संदर्भ - बल्कि यूँ कहें कि उनसे भी अधिक उच्च और उदात्त संदर्भ - भरे पड़े हैं। यदि मेरी यही कामना होती कि मैं अतीत के उन तमाम बयानों का वर्णन करूँ तो ईश्वर ने मुझे अपने ज्ञान और अपनी क्षमता का जो विलक्षण उपहार प्रदान किया है उसके बल पर मैं ऐसा अवश्य कर सकता। परन्तु मैंने उतने में ही संतोष किया है जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है ताकि तुम इस यात्रा में कहीं थक न जाओ और पीछे लौटने को उतावले न हो जाओ अथवा कहीं तुम उदासी और निराशा से न घिर जाओ तथा खिन्नता और क्लांति से परिव्याप्त न हो उठो।

13. अपने निर्णय में निष्पक्ष बनो और इन उदात्त शब्दों पर मनन् करो। उसके बाद उन लोगों के बारे में पता करो जो ईश्वर से प्राप्त किसी साक्ष्य या प्रमाण के बिना ही ज्ञानी होने का दावा करते हैं और जो इन दिवसों से अनभिज्ञ बने बैठे हैं जबकि दिव्यता के क्षितिज पर ज्ञान और विवेक के प्रकाश-वृत्त का अभ्युदय हुआ है, जबकि हर किसी को उसका देय अंश प्रदान किया जा चुका है और हरेक को अपने-अपने पद और पैमाने के अनुसार यह दायित्व सौंपा जा चुका है कि इन संदर्भों के बारे में वे क्या कह सकते हैं। निस्संदेह, उनके अर्थों ने लोगों के मस्तिष्कों को चकित कर रखा है तथा ईश्वर के चरम विवेक और निगूढ़ ज्ञान के बारे में उनमें निहित रहस्यों को समझने में अत्यंत शुद्ध आत्माएँ भी अशक्त रहीं हैं।

14. यदि वे ये कहें कि "यह वाणी निस्संदेह परमेश्वर की ओर से है और उनके बाह्य अर्थ के अलावा उनका और कोई अर्थान्तर नहीं हो सकता" तो ईश्वरीय ग्रंथ के जनों के बीच जो आस्थाहीन लोग हैं उनके खिलाफ वे भला क्या आपत्ति उठा सकते हैं ? क्योंकि जब इन आस्थाहीन लोगों ने अपने-अपने पवित्र ग्रंथों में उपरोक्त अनुच्छेदों

को देखा और अपने धर्मगुरुओं द्वारा किए गए शाब्दिक अर्थान्तरण को सुना तो उन्होंने परमेश्वर की एकता के प्रकटावतारों, उसकी एकमेवता के व्याख्याकारों और उसकी पावनता के मूर्तिमंत रूपों में ईश्वर की पहचान करने से इंकार कर दिया। वे उनमें अपनी आस्था प्रकट करने से चूक गए, उनके प्राधिकार के सम्मुख झुकने में विफल रहे। इसका कारण यह था कि उन्होंने सूर्य को अंधकारमय होते या आकाश के तारों को धरती पर टपकते अथवा देवदूतों को आकाश से धरती पर उतरते नहीं देखा और बस इसी कारण वे ईश्वरीय अवतारों और संदेशवाहकों से विवाद में उलझे रहे। बल्कि यूँ कहें कि उन्होंने उन अवतारों को अपने विश्वासों और मान्यताओं से परे पाया और इसीलिए उन्होंने उन पर पाखंडी होने, मूर्खता, पथभ्रष्टता और अविश्वास के ऐसे-ऐसे लांछन लगाए कि उनका वर्णन करते हुए मेरी गर्दन शर्म से झुक जाती है। कुरान पढ़कर देखो ताकि तुम्हें ये सभी व्याख्या मिल सकें और उन लोगों में से बनो जो उनके अर्थ समझते हैं। यहाँ तक कि ये लोग आज भी उसका अवतरण देखना चाहते हैं जिसकी जानकारी उन्हें उनके शास्त्रों से मिली और जिसका ज्ञान उन्होंने अपने धर्मगुरुओं से पाया। वे कहते हैं : "भला ये संकेत कब प्रकट होंगे कि हम उनमें विश्वास कर सकें ?" मगर ऐसी स्थिति में तुम उनकी दलीलों का खंडन कैसे कर सकोगे, उनके प्रमाणों को भला कैसे अस्वीकार सकोगे तथा उनकी आस्था और उनके धर्मग्रंथों और धर्मगुरुओं के व्याख्यानों को चुनौती कैसे दे सकोगे ?

15. और यदि वे यह उत्तर दें कि "इन लोगों ने अपने हाथों में जो धर्मग्रंथ थाम रखे हैं, जिन्हें वे 'ईशवाणी' (गॉस्पेल) कहते हैं और जिसका सम्बंध वे मेरी के पुत्र ईसा मसीह से ठहराते हैं, उन्हें ईश्वर ने प्रकट नहीं किया है और उनका उद्गम परमात्मा के प्रकटित अवतरणों से नहीं हुआ है", तो इसके प्रत्युत्तर में उस परमेश्वर की असीम करुणा में आस्था न होने का अभिप्राय छिपा होगा जो कि सम्पूर्ण करुणा का स्रोत है। ऐसा होने पर, अपने सेवकों के प्रति ईश्वर का प्रमाण अपूर्ण रह जाता और उसकी कृपा अधूरी ही रह जाती। उसकी ज्योतिर्मय कृपा का प्रकाश भला कैसे फैल पाता और न ही उसकी करुणा सबको आच्छादित कर पाती। क्योंकि यदि प्रभु यीशु के स्वर्गारोहण के साथ ही उनका पवित्र ग्रंथ भी स्वर्ग को कूच कर गया होता तो उस 'पुनरुत्थान के दिवस' में ईश्वर लोगों को भला कैसे दंडित कर पाते, जैसाकि

धर्म के इमामों ने लिखा था और जिसकी पुष्टि उस धर्म के प्रबुद्ध धर्माधिकारियों ने की थी ?

16. अतः अपने हृदय में यह विचार करो: तथ्यों को जैसाकि तुम देख रहे हो और जिनका मैं स्वयं भी साक्षी हूँ, उनके मद्देनजर तुम कहाँ भाग सकते हो और भला किसकी शरण में जा सकते हो ? भला तुम किसकी ओर अपनी दृष्टि करोगे ? किस धरा-धाम पर तुम रहोगे और किस सिंहासन पर विराजोगे ? किस मार्ग का अनुगमन करोगे तुम और किस बेला में विश्राम करोगे ? तुम्हारा अंत भला क्या होगा ? तुम अपनी निष्ठा का दामन कहाँ सुरक्षित रखोगे और कहाँ बाँधोगे अपनी आज्ञाकारिता की डोर ? सौगन्ध उसकी जो अपनी एकमेवता में स्वयं को प्रकट करता है और जो स्वयं ही अपनी एकता का साक्षी है! यदि तुम्हारे हृदय में ईश्वर के प्रेम की अग्नि जला दी जाए तो तुम्हें न तो आराम की तलाश होगी और न ही शांति की कामना। न तुम्हें किसी हँसी-खुशी की लालसा होगी और न ही किसी विश्रान्ति की, बल्कि तुम दिव्य समीपता, पवित्रता और सौन्दर्य के दायरे में उच्चतम शिखरों को मापने के लिए आतुर हो उठोगे। तुम एक बिछुड़ी हुई आत्मा की तरह विलाप कर उठोगे और उत्कंठा भरे हृदय के समान क्रन्दन करोगे। और जब तक परमात्मा तुम्हारे समक्ष अपने धर्म को प्रस्तुत नहीं कर देंगे तब तक तुम्हें किसी भी ठिकाने पर चैन नहीं मिलेगा।

17. हे दिव्य मार्गदर्शन के वितान में उड़ान भरने वाले और सच्चरित्रता के चित्ताकाश की ऊँचाइयों को छूने वाले! यदि तुम्हारे मन में इन दिव्य संदर्भों को समझने की अभिलाषा हो, यदि तुम दिव्य ज्ञान के रहस्यों का साक्षी बनना और सबको आच्छादित करने वाली ईश्वरीय वाणी से सुपरिचित होना चाहते तो तुम्हारे लिए यह गरिमानुकूल होगा कि ईश्वर ने जिसे अपने ज्ञान का स्रोत, विवेक का आकाश और अपने रहस्यों की मंजूषा बनाकर भेजा है उससे तुम इन प्रश्नों तथा अपने उद्गम और अन्तिम लक्ष्य के बारे में जिज्ञासा करो और जानो। क्योंकि यदि परमात्मा के सारतत्व के क्षितिज पर चमकने वाले ये प्रभासित दीप नहीं होते तो लोगों को अपनी दाईं और बाईं भुजा के बीच का अन्तर भी पता नहीं होता। तो फिर भला वे उन गहन सत्यों की उत्तुंगता तक कैसे पहुँच पाते या कैसे भला उनकी सूक्ष्म गहराइयों को समझ पाते ? अतः ईश्वर से हमारी याचना है कि वे हमें इन उच्छल महासागरों में निमग्न कर दें, इन जीवनदायिनी बयारों के कृपामय प्रवाह से भर दें

और हमें इन दिव्य तथा उच्च वितानों में निवास करने में सहायता दें। शायद, कहीं हम दूसरों से याचित वस्तुओं से मुक्त हो सकें और अपने भाई-बंधुओं से उधार माँगकर पहने गए वस्त्रों को उतारकर फेंक सकें, ताकि वह परमेश्वर हमें उनके बदले अपनी कृपा का वस्त्र पहनने को दे, अपने मार्गदर्शन के परिधान से विभूषित कर सके और हमें ज्ञान की नगरी में प्रवेश दे सके।

18. जो कोई भी इस नगरी में प्रवेश को प्राप्त होगा वह इसके रहस्यों को परखने से पहले ही हर शास्त्र का मर्म समझ पाएगा और उस नगरी के वृक्षों के पत्ते-पत्ते से ऐसे ज्ञान और विवेक हासिल करेगा जो सृष्टि की निधियों में निहित दिव्य सम्प्रभुता के रहस्यों को परिवेष्टित करते हैं। उस सृष्टि का रचयिता और नियन्ता वह परमात्मा उन सबसे परम महिमामय हो जिन्हें उसने उत्पन्न किया है और अपनी सृष्टि में निर्धारित स्वरूप दिया है। उस सार्वभौम संरक्षक, उस सर्वशक्तिमय स्वयंभू की सौगन्ध! यदि मैं तुम्हारे नेत्रों के समक्ष शक्ति और क्षमता की दाहिनी भुजा से सृर्जित उस नगरी के पटों को खोल देता तो तुम वह देख पाते जिसे तुमसे पहले किसी और ने नहीं देखा और तुम उन बातों के साक्षी बनते जिनका पहले और कोई भी साक्षी न बन सका। तुम निगूढ़तम चिह्नों और जटिलतम संकेतों को पहचान पाते तथा अंत के बिन्दु में आदि के रहस्यों को स्पष्ट देख पाते। तुम्हारे लिए सब कुछ सरल बन जाता, अग्नि बन जाती प्रकाश, ज्ञान और वरदान और तुम सुरक्षा के साथ निवास करते पावनता की परिधि में।

19. परन्तु प्रभु के विवेक के रहस्यों से वंचित होने पर - जिसे हमने इन आशीर्वादित एवं मार्मिक शब्दों में तुम्हें प्रदान किया है - तुम दिव्य ज्ञान के महासागर के एक जलकण या दिव्य शक्ति के स्फटिक स्रोत को प्राप्त करने में भी विफल रह जाते तथा एकमेवता की लेखनी और परमेश्वर की अंगुली द्वारा तुम्हारी गणना मूर्खों में की जाती और न ही तुम दिव्य ग्रंथ का एक शब्द भी समझने में सक्षम हो पाते या आदि और अंत के बारे में ईश्वर के आत्मीय जनों[14] की वाणी भी समझ पाते।

20. हे तुम जिससे बाह्य रूप से मेरी कभी मुलाकात नहीं हुई है किन्तु फिर भी जो मेरे हृदय का अंतरंग है! अपने निर्णय में निष्पक्ष रहो और वह जो तुम्हें देखता और जानता है उसके समक्ष स्वयं को अवनत करो यद्यपि तुम उसे नहीं देखते-जानते। क्या कोई आत्मा ऐसी भी हो सकती है जो इतनी ठोस दलीलों, स्पष्ट प्रमाणों एवं सटीक संकेतों द्वारा इन शब्दों की व्याख्या कर सके जिससे साधक के हृदय को सांत्वना और सुनने वाले की आत्मा को दिलासा मिल सके ? नहीं, उसकी सौगन्ध जिसके हाथों में मेरी आत्मा है! जब तक कोई व्यक्ति उस नगरी में प्रवेश नहीं कर

जाता जिस नगरी की आधारशिलाएँ रक्तांभ माणिक के पर्वतों पर रखी गई हैं, जिसकी दीवारें ईश्वरीय एकता के लहसुनिया पत्थरों से चुनी गई हैं, जिसके द्वार अमरता के हीरों से तराशे गए हैं और जिसकी भूमि ईश्वरीय कृपा की सुरभि बिखेरती है, तब तक किसी को भी एक ओस की बूंद भर भी पीने की अनुमति नहीं है।

21. निगूढ़ता के अनन्त पर्दों के तले, तुम्हें ये कतिपय गुप्त रहस्य प्रदान करने के बाद, अब हम प्राचीन ग्रंथों की अपनी विवेचना पर वापस लौटते हैं ताकि तुम्हारे पैर कहीं फिसलें नहीं और तुम पूर्ण निश्चय के साथ वह अंश ग्रहण कर सको जो हम ईश्वर के नामों और अलंकरणों की परिधि में जीवन के तरंगित महासागरों से तुम्हें प्रदान करेंगे।

22. ईशवाणी (गॉस्पेल) के सभी ग्रंथों में प्रकट किया गया है कि वह जो ईश्वर की चेतना[15] है, उसने अपने अनुयायियों से विशुद्ध प्रकाश की भाषा में कहा था: "जान लो कि आकाश और धरती भले मिट जाएँ मगर मेरे शब्द कभी नहीं मिटेंगे।"[16] जैसाकि तुम्हारे लिए यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित है, इन शब्दों का बाहरी अर्थ यह है कि ईश्वरीय वाणी का ग्रंथ संसार के अंत तक लोगों के हाथों में रहेगा, उनके विधान कभी समाप्त नहीं होंगे, उनके प्रमाण कभी नष्ट नहीं होंगे और जो कुछ भी उनमें निहित, प्रस्तावित या निर्धारित है वे सदा अक्षुण्ण बने रहेंगे।

23. हे मेरे बंधु! अपने हृदय को पावन बना लो, अपनी आत्मा को प्रकाशमय और अपनी दृष्टि को प्रखर करो ताकि तुम दिव्य-विहगों के मधुर आलापों को समझ सको और अनन्तता के साम्राज्य में कलरव करते पवित्रता के कपोतों का स्वर-निनाद सुन सको और तुम उनके स्वरों के अंततर्म अर्थ और निगूढ़ रहस्यों को जान सको। क्योंकि यदि तुम इन शब्दों के बाहरी अर्थों के अनुरूप उनका अर्थान्तर करते तो तुम कभी भी उसके धर्म की सत्यता प्रमाणित नहीं कर पाते जिसका आगमन प्रभु यीशु के बाद हुआ था और न ही तुम विरोधियों को चुप करा पाते अथवा विवादों में उलझे धर्मानुयायियों पर विजय पा सकते। कारण यह है कि ईसाई धर्मगुरु इस श्लोक के द्वारा यह साबित करना चाहते हैं कि ईशवाणी (गॉस्पेल) कभी भी निरस्त नहीं होगी और भले ही उनके धर्मग्रंथों में दिए गए सारे संकेत प्रकट कर दिए जाएँ और प्रतिज्ञापित अवतार का आविर्भाव हो जाए मगर फिर भी उस अवतार के समक्ष गॉस्पेल के विधि-विधानों के अनुसार लोगों पर शासन करने के सिवा अन्य कोई

चारा नहीं होगा। वे यह दलील देते हैं कि यदि वह अवतार धर्मग्रंथों के अनुसार सभी चिह्नों को प्रकट कर दे मगर ईसा मसीह द्वारा प्रकटित विधानों से अलग कोई भी निर्णय दे तो वे उसे अवतार के रूप में स्वीकार नहीं करेंगे और न ही उसके बताए मार्ग पर चलेंगे। तो, यह बात उनकी नजर में इतनी ज्यादा स्पष्ट और स्व-प्रमाणित है।

24. वस्तुतः तुम इस युग में विद्वान और मूर्ख दोनों ही प्रकार के जनों को एक ही प्रकार की टिप्पणियाँ मुखरित करते सुनोगे: ‘‘पश्चिम से सूर्य का उदय नहीं हुआ है और न ही आह्वानकर्ता ने धरती और आकाश के बीच अपना आह्वान ही सुनाया है। जल ने कतिपय भूभागों को उजागर नहीं किया है, दज्जाल[17] का अभ्युदय नहीं हुआ है, सूफायनी[18] का आविर्भाव नहीं हुआ है और न ही धूप में ‘मन्दिर’ को देखा गया है।’’ मैंने स्वयं ही अपने कानों से एक धर्मगुरु को यह मुनादी करते हुए सुना है कि ‘‘यदि ये सारे संकेत प्रकट हो जाएँ और उस चिर-प्रतीक्षित काईम का पदार्पण हो जाए और यदि वह हमारे गैर-महत्वपूर्ण विधि-विधानों के प्रसंग में भी कुरान से भिन्न कोई नियम प्रकट करे तो हम निस्संदेह उसे पाखंडी करार देंगे, उसे मौत के घाट उतार देंगे और सदा-सदा के लिए उसे मानने से इंकार कर देंगे।’’ मैंने अस्वीकारकर्ताओं की ऐसी ही अन्य कई टिप्पणियाँ भी सुनी हैं। और यह सब तब है जबकि कयामत के दिन दिखा दिए गए हैं और ‘तुरही’ बजा दी गई है और आकाश तथा धरती के सभी निवासियों को एकत्रित किया जा चुका है और तराजू स्थापित कर दी गई है और पुल की रचना हो गई है और पवित्र आयतें भेज दी गई हैं और सूर्य जगमगा उठा है और सितारे ओझल कर दिए गए हैं और आत्माओं को नवजीवन दे दिया गया है और ‘चेतना’ की साँस फूँक दी गई है और देवदूतों की सेना सजा दी गई है और स्वर्ग सन्निकट ला दिया गया है और नरकाग्नि प्रज्वलित कर दी गई है! ये सब बातें सामने आ चुकी हैं और तब भी आज तक इनमें से किसी भी व्यक्ति ने इन संकेतों को पहचाना नहीं है! वे सब के सब अपने ही कफन तले मृतप्राय बने लेटे हैं, सिवाय उनके जिन्होंने ईश्वर के प्रति अपनी आस्था प्रकट की है और उसकी शरण स्थली है, जो इस युग में उसके परम स्वर्ग में आनन्दमग्न हैं और जिन्होंने उसकी सद्कृपा के मार्ग का अनुगमन किया है।

25. इस तरह जब वे अपने ही अहं के पर्दे में निमग्न हैं, तो सामान्य लोग पवित्रता के मधुर अलाप को समझने, करुणा की सुरभि ग्रहण करने अथवा ईश्वर की आज्ञा के

अनुसार उनका मार्गदर्शन पाने में विफल रहे हैं जो पवित्र ग्रंथों के अभिरक्षक हैं। उस प्रभु ने यह घोषणा की है और उसके शब्द वस्तुतः सत्य हैं, "अतः यदि तू इसे न जान सके तो उनसे पूछ जो पवित्र ग्रंथों के अभिरक्षक हैं।"[19] नहीं, बल्कि उन्होंने उनकी ओर से मुँह मोड़ लिया है और बदले में अपनी ही कल्पना के सामीरों[20] का अनुसरण किया है। इस तरह, वे अपने प्रभु की करुणा से बहुत दूर भटक गए हैं और उसकी उपस्थिति के दिवस में उसके सौन्दर्य का सत्संग पाने से वंचित रहे हैं। क्योंकि जैसे ही वह उन लोगों के बीच ईश्वर के संकेतों और प्रमाणों को लेकर प्रकट हुआ, वैसे ही उन्हीं लोगों ने - जो कि उसके प्रकटीकरण के युग की ओर टकटकी लगाए बैठे थे, जिन्होंने रात-दिन उसका आह्वान किया था, जिन्होंने उन्हें एकजुट कर देने के लिए उससे याचना की थी और यह वरदान माँगा था कि वे उसके मार्ग पर अपने आप को न्यौछावर कर सकें, उसके मार्गदर्शन के प्रकाश से अपनी राह पा सकें - हाँ, उन्हीं लोगों ने, उसकी निन्दा और अवमानना की और उसे ऐसी-ऐसी यंत्राणाएँ दीं जिनका वर्णन कर सकना मेरी सामर्थ्य से बाहर और तुम्हारी सहनशक्ति से परे है। इस क्षण मेरी लेखनी क्रन्दन कर उठी है और मेरी स्याही असह्य वेदना से रुदन करने लगी है। ईश्वर की सौगन्ध! यदि तुम अपनी आंतरिक श्रवणेन्द्रियों से सुन पाते तो वस्तुतः तुम स्वर्ग के निवासियों का विलाप सुन पाते और यदि तुम अपनी आँखों के सामने पड़े पर्दे को हटा पाते तो स्वर्ग की सहचरियों और पावन आत्माओं को भावाभिभूत होकर अपने मुखड़े नोंचते हुए और धराशायी पड़े देख पाते।

26. अफसोस, अफसोस! उन यातनाओं के लिए जो उस पर आ पड़ी थीं जोकि परमात्मा के आत्म का प्रकटावतार था और उन यंत्रणाओं के लिए जो उसे और उसके प्रियजनों को भोगनी पड़ी थी! लोगों ने उन्हें ऐसी-ऐसी पीड़ाएँ दीं जैसी किसी भी आत्मा ने किसी अन्य आत्मा को कभी नहीं दी थी और जैसा कि किसी भी आस्थाहीन व्यक्ति ने किसी धर्मानुयायी के विरूद्ध नहीं रचा था और न ही उन्हें किसी धर्मानुयायी के हाथों ऐसी यातना कभी भोगनी पड़ी होगी। अफसोस, अफसोस! कि अमर्त्य आत्मा को अंधकारमय भूमि पर आसन मिला, पावन चेतना को गरिमा के अभयस्थल में विलाप करना पड़ा, ईश्वरीय सिंहासन के स्तम्भों को उदात्त साम्राज्य में विखंडित होना पड़ा, रक्ताभ भूमि में विश्व के आह्लाद को विषाद में परिणित होना पड़ा और स्वर्णिम साम्राज्य में 'बुलबुल' के कलरव को खामोश कर दिया गया। जो कुछ भी

उनके हाथों से गुजरा है और उन्होंने जिन-जिन कारनामों को अंजाम दिए हैं उनके लिए धिक्कार है उन पर!

27. तो उनके बारे में ध्यान से सुनों ! दिव्य-विहग अपने मधुरतम और अति विलक्षण स्वरों में तथा परिपूर्णतम और परम् उदात्त स्वरमाधुर्य के साथ क्या कह रहा है - उस वाणी से जो कि अभी से लेकर "उस युग तक जब कि मानवजाति विश्व के परम प्रभु के समक्ष खड़ी होगी" वह पश्चात्ताप से भर उठेगी: "हालाँकि इसके पूर्व उन्होंने नास्तिकों पर विजय पाने के लिए प्रार्थना की थी, लेकिन जब उनके समक्ष उस पूर्वज्ञात प्रभु का पदार्पण हुआ तो उन्होंने उसे मानने से इन्कार कर दिया। इन आस्थाहीनों पर परमात्मा का श्राप बरसे !"[21] वस्तुतः ऐसी ही है उनकी स्थिति और उनके रिक्त व्यर्थ जीवन की यही तुच्छ उपलब्धियाँ हैं। वह दिन दूर नहीं जब वे यातनाओं की आग में झोंक दिए जाएँगे और तब कोई भी उनका सहायक, उनका सहारा नहीं होगा।

28. जहाँ तक कट्टरपंथियों द्वारा पवित्र पाठों को विकृत करने और भ्रामक लोगों द्वारा उनका अर्थ-परिवर्तन करने का सवाल है, जो कुछ भी कुरान में प्रकट किया गया है अथवा जो कुछ भी तुमने निष्कलंकता के उन सूर्यों और गरिमा के चन्द्रों[22] से सीखा है, उनके सिवा और किसी भी ज्ञान से दिग्भ्रमित न हो। इन कथनों का अभिप्राय केवल कुछ विशिष्ट एवं स्पष्ट रूप से संकेतित अनुच्छेदों के संदर्भ में है। अपनी दीनता और दुर्बलता के बावजूद, यदि मैं चाहूँ तो मैं निस्संदेह तुम्हारे समक्ष इन अनुच्छेदों की व्याख्या करने में सक्षम हूँ, लेकिन इससे हम अपने स्पष्ट लक्ष्य और सीधे मार्ग से भटक जाएँगे। इसके कारण हम सीमित संदर्भों में सिमट जाएँगे और उससे दूर चले जाएँगे जो कि उस सर्वप्रशंसित प्रभु के दरबार में रुचिकर है।

29. हे तू जिसका उल्लेख इस विस्तारित पाती में किया गया है और जिसे वर्तमान के इस आच्छन्न अंधकार के बीच सिनाई के दिव्य प्रकटीकरण में पवित्र पर्वत की प्रभा से प्रकाशित किया गया है! अपने हृदय को प्रभुनिन्दा के प्रत्येक स्वर और अतीत में सुने गए हर दुष्टतापूर्ण संदर्भों से मुक्त और पवित्र कर ले ताकि तू वफ़ादारी के जोसेफ (यूसुफ) से अनन्तता की मधुर सुरभि ग्रहण कर सके, स्वर्गिक मिस्त्र देश (इज़िप्ट) में प्रवेश पा सके और इस आलोकित, ज्योतिर्मय पाती से मुक्ति का सुवास पा सके - उस पाती से जिसमें परम लेखनी ने अपने उदात्त, परमोच्च प्रभु के प्राचीन

रहस्यों को अंकित किया है। कदाचित आश्वस्ति से सम्पन्न लोगों के बीच पवित्र पातियों में तेरा नाम अंकित किया जा सके।

30. हे मेरे सिंहासन के समक्ष खड़े प्राणी और फिर भी उससे अनभिज्ञ! तू यह जान कि जो कोई भी दिव्य रहस्यों की उत्तुंग ऊँचाइयों तक उड़ान भरना चाहे उसे अपने धर्म के लिए अपनी पूरी शक्ति और क्षमता भर प्रयास करना होगा ताकि मार्गदर्शन का पथ उसके समक्ष प्रशस्त किया जा सके। और यदि उसकी मुलाकात उससे हो जाए जो परमात्मा के धर्म का दावेदार हो और जो अपने परमेश्वर से प्राप्त ऐसे प्रमाणों को धारण करता हो जिन्हें प्रकट करना सामान्य लोगों के वश के बाहर हो तो अवश्य ही उसे उन सब बातों में उसका अनुसरण करना होगा जिसे वह घोषित, आज्ञापित और निर्धारित करना चाहता हो - भले ही वह समुद्र के धरती होने का निर्णय कर दे और धरती को आकाश की संज्ञा दे दें अथवा यह कहे कि धरती स्वर्ग से ऊपर है या स्वर्ग से नीचे, अथवा वह किसी भी परिवर्तन या रूपांतरण का निर्धारण करे - क्योंकि वह निस्संदेह दिव्य रहस्यों का ज्ञाता है, अदृश्य सूक्ष्मताओं को देखने-जानने वाला और ईश्वर के विधि-विधानों का मर्मज्ञ है।

31. यदि इस सम्पूर्ण धरती के लोग उसका अनुपालन कर पाते जिसका उल्लेख किया गया है तो ये बात उनके लिए सरल हो जाएगी और ऐसे शब्द तथा संदर्भ उन्हें ईश्वर के नामालंकरणों के महासिंधु से दूर नहीं रख सकेंगे। और यदि लोगों ने इस सत्य को जान लिया होता तो उन्होंने ईश्वर की कृपाओं से इंकार नहीं किया होता और न ही वे उसके धर्मावतारों के विरूद्ध उठ खड़े होते, उनसे विवाद करते अथवा उन्हें अस्वीकार करते। यदि गहन परीक्षण करना हो तो ऐसे ही अनुच्छेद पवित्र कुरान में भी निहित हैं।

32. साथ ही यह भी जान लो कि इन्हीं शब्दों के माध्यम से ईश्वर अपने सेवकों को कसौटी पर कसता है तथा अनुयायी को निष्ठाहीन से, अनासक्त को संसारी से, पवित्र को दूषित से, सुकर्मी को अन्यायी से और इसी तरह सबको एक-दूसरे से अलग वर्गीकृत करता है। पावनता के कपोत ने यह घोषणा की है: “क्या लोगों ने यह सोच रखा है कि जब वे कहते हैं ‘हम आस्थावान हैं’ तो उन्हें यूँ ही छोड़ दिया जाएगा और कसौटी पर नहीं कसा जाएगा ? ”[23]

33. वह जो कि प्रभु पथ का यात्री है और ईश्वरीय पथ का अनुगामी है, उसके लिए उचित है कि वह स्वयं को आकाश और धरती के सभी प्राणियों से अनासक्त कर ले।

ईश्वर के सिवा उसे सब कुछ त्याग देना चाहिए ताकि कदाचित उसके समक्ष कृपा के पटों को खोला जा सके और शुभ तथा मंगल की मृदुल बयारें उसकी ओर प्रवाहित की जा सकें। और जब वह अपनी आत्मा पर हमारे द्वारा प्रदत्त अन्तर्निहित अर्थ और व्याख्या का सारांश अंकित कर लेगा तो वह इन सभी संकेतों के अर्थ समझ जाएगा और ईश्वर उसके मानस में दिव्य प्रशान्ति भर देंगे तथा उसे एक आत्मतुष्ट व्यक्ति बना देंगे। इसी तरह तुम उन प्रश्नों के संदर्भ में सभी दुरूह श्लोकों के अर्थ भी समझ जाओगे जिनके बारे में तुमने अनादर के आसन पर बैठे इस 'सेवक' से सवाल किए हैं जो इस धरा-धाम पर एक निर्वासित के रूप में विचरण कर रहा है, जिसका न कोई मित्र है, न विश्रान्ति और न सहायता प्रदान करने वाला ही कोई, जिसने अपना समस्त विश्वास सिर्फ ईश्वर में स्थित किया है और जो सदासर्वदा यह घोषणा करता है: "वस्तुतः हम परमात्मा की ओर से आए हैं और उसी के पास लौट जाएँगे।"[24]

34. तुम यह जानो कि जिन अनुच्छेदों को हमने "दुरूह" कहा है वे सिर्फ उन्हीं लोगों की नजरों में दुरूह नजर आते हैं जो मार्गदर्शन के क्षितिज से ऊपर उठकर उड़ान भरने तथा कृपा की विश्रान्ति में ज्ञान की ऊँचाइयों तक पहुँचने में विफल रहे हैं। क्योंकि जिन्होंने दिव्य प्रकटीकरण के कोषालयों को पहचान लिया है और प्रभु प्रेरणा से स्वर्गिक प्राधिकार के रहस्यों का अवलोकन कर लिया है, उनके लिए ईश्वर के सभी श्लोक सुस्पष्ट हैं और उनके सभी संकेत उजागर हैं। ऐसे लोग शब्दों का आवरण पहने गुह्य रहस्यों को उसी स्पष्टता से जान लेते हैं जैसे तुम सूर्य की ऊष्मा को जान जाते हो या जल की आर्द्रता को। अरे नहीं, बल्कि इससे भी अधिक स्पष्टतापूर्वक। परम उदात्त है परमेश्वर, उसके प्रियजनों के लिए हमारी प्रशंसा से भी बढ़कर और अपने प्रति उन सबकी स्तुति से भी ऊपर!

35. अब जबकि हम इस सर्वोत्कृष्ट विषय पर पहुँच चुके हैं और परम उदात्त, परमोच्च परमेश्वर की अतुल्य कृपा के माध्यम से मेरी लेखनी से जो कुछ प्रवाहित हुआ है उसकी बदौलत हम ऐसी उत्तुंग ऊँचाइयों तक आ चले हैं तो हमारी इच्छा है कि तुम्हें उन चरणों के बारे में बताएँ जिनसे गुजरते हुए साधक परमात्मा तक अपनी यात्रा करता है। कदाचित इससे तुम्हारे समक्ष वह सब कुछ प्रकट हो जाए जो तुम्हारी इच्छा है, ताकि प्रमाण पूर्ण हो सके और असीम कृपा प्रवाहित हो उठे।

36. तू यह सत्य जान कि परमात्मा की साधना में साधक को अत्यंत प्रारम्भ से ही खोज की वाटिका में प्रवेश प्राप्त कर लेना चाहिए। इस यात्रा में उस यात्री के लिए यह आवश्यक है कि वह ईश्वर के सिवा अन्य सभी कुछ से स्वयं को विरक्त कर ले तथा धरती और आकाश में विद्यमान सभी वस्तुओं से अपनी आँखें मूद ले। उसके हृदय में न तो किसी के लिए प्रेम हो न ही घृणा ताकि ये भावनाएँ उसे स्वर्गिक सौन्दर्य के अधिवास तक पहुँचने से रोक न दें। वह अपनी आत्मा को व्यर्थाभिमान के पर्दों से मुक्त और पावन बना ले तथा सांसारिक अहंकार, बाह्य ज्ञान एवं अन्य किसी भी ईश्वर-प्रदत्त उपहारों की शेखी न बघारे। वह अपनी पूरी क्षमता से सत्य की खोज में अपना समय व्यतीत करे ताकि ईश्वर उसे अपनी कृपा और करुणा के पथ की ओर मार्गदर्शित कर सकें। क्योंकि वस्तुतः ईश्वर ही अपने सेवकों का सर्वश्रेष्ठ सहायक है। उस परमात्मा ने कहा है, और निस्संदेह उसकी वाणी सत्य है कि "जो कोई भी हमारे लिए प्रयास करेगा, अपने पथ पर हम अवश्य ही उसका मार्गदर्शन करेंगे।"[25] और उसने यह भी कहा है: "ईश्वर से डरो और वह तुम्हें ज्ञान देगा"।[26]

37. इस यात्रा में वह यात्री न जाने कितने परिवर्तनों और रूपांतरणों को घटित होते देखेगा, विविध मिलनों और बिछोहों का साक्षी बनेगा। सृष्टि के रहस्यों में उसे दिव्यता के रहस्य दिखते हैं और वह मार्गदर्शन के पथों और अपने प्रभु के संमार्गों को तलाश लेता है। परमात्मा की खोज में निकला प्राणी ऐसी ही उच्च स्थिति को प्राप्त करता है और उसकी ओर तेजी से बढ़ने वाला व्यक्ति ही ऐसी ऊँचाइयों को छूता है।

38. जब एक बार साधक इस उदात्त पद को प्राप्त कर लेता है तो वह 'प्रेम और आह्लाद की नगरी' में प्रवेश को प्राप्त होगा जहाँ उस पर स्नेह की बयार प्रवाहित की जाएगी और चेतना के झकोरे संचारित किए जाएँगे। इस स्थिति में आकर साधक उत्सुकता के परम आनन्द और उत्कंठा की मोहक सुरभि से इस तरह अभिभूत हो उठता है कि उसे न अपने बाएँ का ज्ञान होता है और न अपने दाएँ का और न ही उसे थल और जल या मरुभूमि तथा पर्वत के बीच का अन्तर ही ज्ञात होता है। वह हर क्षण एक उत्कंठा की आग में जलता रहता है और इस संसार में वियोग के आक्रमण से दग्ध हो जाता है। वह प्रेम के पाराण पर्वत से तेज़ी से गुज़रते हुए भावातिरेक के होरेब रूपी बियावान से होकर यात्रा करता है। उसकी हालत ऐसी हो जाती है कि इस पल वह हँस उठता है और अगले ही पल अपनी आत्मा से चीत्कार कर उठता है। एक क्षण वह शान्ति की नींद सो रहा होता है और अगले ही क्षण वह डर से काँप उठता है। उसे किसी चेतावनी की परवाह नहीं, कुछ भी उसे उसके उद्देश्य से नहीं डिगा सकता और न ही कोई कानून उसे झुका सकता है। अपने आदि और अंत के

बारे में परमात्मा की सहर्ष आज्ञा के पालन के लिए वह कमर कस कर खड़ा हो जाता है। हर साँस के साथ वह अपना जीवन न्यौछावर करता चलता है और अपनी आत्मा का उत्सर्ग। शत्रुओं की बरछियों का सामना करने के लिए वह अपनी छाती खोल लेता है और नियति की तलवार के अभिवादन में अपना सिर उठा लेता है। बल्कि यूँ कहें कि वह अपनी ही हत्या के लिए आए व्यक्ति का हाथ चूम लेता है और अपना सर्वस्व समर्पित कर देता है। अपने प्रभु के पथ पर वह अपनी चेतना, आत्मा और देह सब कुछ उत्सर्ग कर देता है और यह सब भी वह अपने प्रियतम की इच्छा से करता है न कि अपनी दीवानगी में। तुम उसे आग में भी शीतल पाओगे और बीच समुद्र में सूखा। हर भूमि उसकी निवास-स्थली है और हर पथ पर विचरते हैं उसके चरण। जो कोई भी इस स्थिति में उसका स्पर्श करेगा उसे उसके प्यार की ऊष्मा का एहसास होगा। वह अनासक्ति के शिखरों पर चलता है, त्याग की वादियों से होकर गुज़रता है। उसकी आँखें सदा ईश्वर की कृपा के चमत्कारों की ओर टकटकी लगाए रहती हैं और उसके सौन्दर्य के दर्शन के लिए लालायित रहती हैं। सचमुच धन्य हैं वे जिन्होंने इस महान पद को प्राप्त किया है क्योंकि यह समुत्सुक प्रेमियों और आह्लादित आत्माओं का पद है।

39. और यात्रा के इस चरण के पूरा हो जाने के बाद जब पथिक ने इस महान पद से भी ऊँची उड़ान भर ली हो तो वह 'दिव्य एकता की नगरी', ऐक्य के उपवन और अनासक्ति के प्रांगण में पदार्पण करता है। इस मनोभूमि में आकर वह मुसाफिर सभी चिह्नों और संकेतों, शब्दों और आवरणों को परे हटाकर हर वस्तु को स्वयं ईश्वर द्वारा प्रदत्त ज्योतिर्मय प्रकाश से आलोकित दृष्टि से देखता है। इस यात्रा के क्रम में वह प्रत्येक विभेद को एक ही वाणी की ओर प्रत्यावर्तित होते देखता है और सभी संकेत एक ही बिंदु पर आकर मिल जाते हैं। इसका साक्षी है वह जिसने अमरता के साम्राज्य में अग्नि की नौका चलाई है तथा गरिमा के शिखर के अंतरंग पथ का अनुसरण किया है: "ज्ञान तो बस एक ही बिंदु है जिसे मूर्खों ने अनेक बनाकर रख दिया है"।[27] यह वह पद है जिसका उल्लेख इस आत्म वचन में किया गया है: "मैं वह हूँ, स्वयं वह और वह है मैं, स्वयं मैं, सिवाय इसके कि मैं मैं हूँ और वह वह है।"[28]

40. ऐसे महान पद को प्राप्त कर लेने के पश्चात यदि वह 'अंत का साक्षात स्वरूप' यह कहे कि "वस्तुतः मैं आदि-बिन्दु हूँ" तो वह यथार्थ रूप से सत्य ही कह रहा होगा। और यदि वह यह कहता कि "मैं उससे भिन्न हूँ" तो भी उसका कथन समानरूपेण

सत्य होता। इसी तरह यदि वह यह घोषणा कर देता कि "मैं सत्य ही आकाश और धरती का स्वामी हूँ" अथवा यह कि "मैं राजाधिराज हूँ" या "मैं उपर्याकाश का प्रभु हूँ" या मुहम्मद या अली हूँ या उनके वंशजों में से एक, या अन्य कुछ भी, तो वह वास्तव में ईश्वर के सत्य की ही घोषणा कर रहा होता है। यथार्थ में, उसका शासन सभी सृजित वस्तुओं पर है और वह अपने 'स्वयं' के सिवा अन्य सब कुछ से ऊपर है। क्या तुमने अतीत काल में गुंजारित ये शब्द नहीं सुने: "मुहम्मद ही हमारे प्रथम हैं, मुहम्मद ही हमारे अन्तिम हैं, मुहम्मद ही हमारे सर्वस्व"? अथवा यह कि "उन सबका आविर्भाव एक ही 'ज्योति' से हुआ है"?

41. इस अवस्थिति में, ईश्वर की एकता और उसकी पवित्रता के चिह्नों का सत्य स्थापित होता है। तुम सत्य ही इन सबको ईश्वर की शक्ति के वक्षस्थल से उदित होते और उसकी करुणा की भुजाओं में आलिंगनबद्ध होते देखोगे और उसके वक्षस्थल और उसकी भुजाओं के बीच का अन्तर भी लुप्त हो जाएगा। इस मनोभूमि पर पहुँचने के बाद परिवर्तन और रूपांतरण की चर्चा करना घोर ईश-निन्दा और जघन्य पाप के समान होगा, क्योंकि यह वह स्थिति है जहाँ से दिव्य एकता की ज्योति की प्रभा अपनी आभा बिखेरती है और उसकी एकता का सत्य अभिव्यक्त होता है तथा उदात्तता एवं निष्ठा के दर्पणों में अनन्त प्रभात की आभाएँ परावर्तित होती हैं। ईश्वर की सौगन्ध! परमात्मा ने इस उच्च स्थान के लिए जो कुछ निर्धारित किया है यदि मैं सम्पूर्णता से उनका वर्णन करूँ तो लोगों की आत्मा रूपी पखेरू उनके शरीर के बन्धनों को त्यागकर उड़ चलेंगी, हर वस्तु के आभ्यंतरिक यथार्थ की जड़ें हिल उठेंगी, सृष्टि के दायरे में रहने वाले सभी विस्मित विमुग्ध रह जाएँगे और वे जो कि भ्रांति के संसारों में विचरण करते हैं, नष्ट और शून्यप्राय होकर रह जाएँगे।

42. क्या तुमने यह नहीं सुना: "ईश्वर की सृष्टि में कोई परिवर्तन नहीं?"[29] क्या तुमने यह नहीं पढ़ा: "तुम ईश्वर के कार्य-व्यवहार में कोई भी परिवर्तन नहीं पा सकते?"[30] क्या तुम इस सत्य के साक्षी नहीं रहे हो: "तुम कृपालु प्रभु की सृष्टि में कोई भी अन्तर नहीं देखोगे?"[31] हाँ, मेरे प्रभु की सौगन्ध! वे जो इस महासिन्धु में निमग्न रहने वाले प्राणी हैं, वे जो इस नौका में आरूढ़ हैं, उन्हें ईश्वर की सृष्टि में कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं होता और उसकी धरती पर कोई विभेद नहीं नज़र आता। और यदि परमात्मा की सृष्टि में बदलाव और परिवर्तन का रुझान न हो तो वे

जो कि स्वयं उस परमेश्वर के अस्तित्व के प्रकट स्वरूप हैं इसके अधीन कैसे हो सकते थे ? ईश्वरीय धर्म के प्रकटकर्ताओं से हम जिन बातों का भी बोध प्राप्त कर सकते हैं, ईश्वर उन सबसे भी अधिक अपरिमित रूप से उदात्त है और उसके बारे में वे जो भी उल्लेख करेंगे ईश्वर उन सबसे कहीं अत्याधिक महिमावान है!

43. महान है परमेश्वर! इस महासागर ने एक से एक प्रखर रत्न उड़ेले हैं, और हवा ने एक लहर तरंगित की है जिससे वे रत्न तट पर आकर एकत्रित हुए हैं। अतः अपने परिधान उतार दे और स्वयं को उसमें निमज्जित कर ले। अपने गुणों की शेखी बघारना छोड़ दे क्योंकि उससे तुम्हारा कोई भी उद्देश्य पूरा नहीं होगा।

44. यदि तुम दिव्य एकता के सागर में इस नगरी के अंतरंग सहचरों में से एक बन सको तो तुम सभी अवतारों और संदेशवाहकों को एक ही आत्मा और देह के रूप में देखोगे, एक ही प्रकाश और चेतना के रूप में पाओगे, इस तरह कि उनमें से प्रथम संदेशवाहक अन्तिम होगा और अन्तिम प्रथम, क्योंकि वे सब उसी एक परमेश्वर के धर्म की घोषणा करने उठे हैं और उन सबने ही दिव्य विवेक के विधानों को स्थापित किया है। वे सभी उसी एक परमेश्वर के साक्षात अवतार हैं, उसी एक परमात्मा की शक्ति के कोषालय हैं, उसी के प्राकट्य के आगार हैं, उसकी आभा के उदय-स्थल और उसकी ज्योति के दिवास्रोत हैं। उनके माध्यम से सभी वस्तुओं के यथार्थ में पावनता के चिह्न उजागर हुए हैं और सभी जीवों में उसकी एकता के संकेत। उनके ही माध्यम से दिव्य यथार्थों के साम्राज्य में गरिमा के तत्व और अनन्त सारतत्वों में स्तुति के व्याख्याकार प्रकट हुए हैं। उन्हीं से समस्त सृष्टि का आविर्भाव हुआ है और वे सब, जिनका उल्लेख किया गया है, उन्हीं के पास लौट जाएँगे। और चूँकि अपने आंतरिक अस्तित्व में वे सब एक ही प्रकाश-पिंड हैं, एक ही रहस्य के सारतत्व हैं, अतः, उनकी बाहरी दशाओं को भी तुम्हें उसी आलोक में देखना चाहिए ताकि तुम उन सबको न केवल एक ही 'स्वरूप' में पहचान सको बल्कि मनसा-वाचा-कर्मणा द्वारा उनकी एकता को अनुभव कर सको।

45. यदि इस स्थिति में तुम उनमें से अन्तिम संदेशवाहक को प्रथम समझ लेते या प्रथम को अन्तिम तो तुम सत्य ही कह रहे होते, जैसा कि उसके द्वारा आदेशित है जो है दिव्यता का निर्झर और प्रभुत्व का स्रोत: ''कहोः ईश्वर का आह्वान करो या उस सर्वदयालु का - तुम चाहे जिस किसी नाम से उसका आह्वान करना चाहो, करो, क्योंकि उसके एक से एक उत्कृष्ट नाम हैं।''[32] वे सब ईश्वर के नाम के ही प्रकटावतार

हैं, उसी परमात्मा के अलंकरणों के उदय-स्थल हैं, उसकी शक्ति के कोषालय और उसकी प्रभुसत्ता के केन्द्रबिंदु हैं, जबकि परमेश्वर - विस्तार हो उसकी शक्ति और महिमा का - अपने सारतत्व में सभी नामालंकरणों से परे और सर्वोच्च विभूषणों से भी उच्च है। इसी तरह, उनकी आत्मा और उनके सशरीर अवतरण दोनों में ही दिव्य शक्तिमानता के प्रमाणों पर विचार करो ताकि तुम्हारा हृदय आश्वस्त हो सके और तुम उनमें से बन सको जो प्रभु की निकटता की परिधियों से होकर गुजरते हैं।

46. इस बिंदु पर आकर मैं एक बार पुनः अपने विषय का प्रतिपादन करूँगा ताकि कदाचित इससे तुम्हें अपने सृष्टिकर्ता की पहचान करने में मदद मिल सके। तू यह जान सके कि परमात्मा - महान और महिमाशाली है वह - किसी भी तरह अपने अंतर्तम तत्व और यथार्थ को प्रकट नहीं करता। अनादिकाल से ही वह अपने सारतत्व की अनन्तता में निगूढ़ और अपने अस्तित्व की असीमता में प्रच्छन्न रहा है। और जब कभी उसने नामालंकरणों के साम्राज्य तथा अपने सौन्दर्य और विभूषणों की परिधि में अपनी गरिमा को प्रकट करना चाहा, तो उसने अदृश्य लोक से अपने अवतारों को प्रत्यक्ष किया ताकि उसके नाम - "प्रकट" और "निगूढ़" के बीच का अन्तर स्पष्ट हो सके और उसके नाम "अंतिम" को "प्रथम" से भिन्न रूप में पहचाना जा सके और ये वचन पूर्ण हो सकें: "वही है प्रथम और अन्तिम, दृश्यमान और गुप्त और वह सर्वज्ञाता है!"[33] इस तरह उसने अपने 'स्वयं' के प्राकट्य और अपने अस्तित्व के दर्पणों में इन परम् उत्कृष्ट नामों और महानतम शब्दों को प्रकट किया है।

47. अतः यह तय हो जाता है कि सभी नामालंकरण और विभूषण इन्हीं महान और पावन 'प्रकाशात्माओं' तक लौट आते हैं। सत्य तो यह है कि उनके नामों में सभी नामों को पाया जा सकता है और उनके गुणों में सभी विभूषणों को। इस आलोक में देखने से, यदि तुम उन्हें ईश्वर के सभी नामों से पुकारते तो यह सत्य ही होता, क्योंकि ये सब नाम एक ही और उनकी 'सत्ता' के सादृश ही तो हैं। अतः इन शब्दों का अभिप्राय समझो और अपने हृदय के वितान तले इसे सहेज लो ताकि तुम अपनी जिज्ञासा का निहितार्थ समझ सको, ईश्वर ने तुम्हारे लिए जैसा निर्दिष्ट किया है उस रूप में उन्हें पूरा कर सको और इस तरह तुम्हारी गिनती उन लोगों में की जा सके जिन्होंने परमात्मा के उद्देश्य तक अपनी पैठ बना ली है।

48. चेतना के महासिंधु में निमग्न सबकी आत्माएँ उस पर कुरबान हो जाएँ! हसन के पुत्र मुहम्मद[34] के बारे में तुमने जो कुछ भी सुना है वह निर्विवाद रूप से सत्य है और हम सब उनके प्रति निष्ठावान हैं। लेकिन धर्म के इमामों ने उनका आवास जाबुल्का[35] नगर में तय कर दिया है जिसका वर्णन उन्होंने अद्‌भुत और विलक्षण संकेतों के साथ किया है। शाब्दिक एवं परम्परागत अर्थ में इस नगर की व्याख्या करना असम्भव होगा और न ही ऐसा कोई नगर कहीं पाया जा सकता है। यदि तुम धरती के सुदूरतम हिस्सों की खाक छान मारो, बल्कि जब तक परमेश्वर की अनन्तता का साम्राज्य कायम रहे, तुम इसके आर-पार तक खोज डालो तो भी तुम्हें ऐसी कोई नगरी नहीं मिलेगी जैसा कि उन्होंने वर्णन किया है क्योंकि सम्पूर्ण धरती भी ऐसे किसी नगर को कभी समाहित नहीं कर सकती। यदि तुम मुझे इस नगरी में ले जा सको तो मैं भी निस्संदेह तुम्हें उस पवित्रात्मा तक पहुँचा सकूँगा जिसके बारे में लोगों का ज्ञान उनकी अपनी क्षमता के अनुसार है न कि उस पवित्रात्मा की सामर्थ्य के अनुसार। मगर चूँकि ऐसा कर सकना तुम्हारी सामर्थ्य के बाहर है अतः इन ज्योतिर्मय आत्माओं द्वारा वर्णित विवरणों और प्रथाओं को उनके सांकेतिक अर्थों में प्रकट करने के सिवा तुम्हारे पास और कोई चारा नहीं है। अतः, उपरोक्त नगर से सम्बंधित परम्पराओं तथा उस पवित्रात्मा के प्रसंग में व्याख्या की ज़रूरत है। जब तुम इस व्याख्या को समझ लोगे तो तुम्हें “रूपांतरण” या ऐसी ही अन्य किसी बात की ज़रूरत नहीं रह जाएगी।

49. अतः तू यह जान कि ये सभी अवतार एक ही आत्मा तथा समान चेतना, नाम और विभूषण के स्वरूप हैं, अतः तुम उन सबको समान रूप से मुहम्मद नाम के धारणकर्ता और हसन के पुत्र के रूप में देखोगे। वे सब तुम्हें ईश्वर की शक्ति रूपी जाबुल्का और उसकी करुणा रूपी जाबुल्सा से प्रकट दिखेंगे, क्योंकि जाबुल्का का अर्थ और कुछ नहीं बल्कि सर्वोच्च आकाश में अनन्तता के कोषागार और अत्युच्च लोक की अदृश्य नगरियों से है। हम साक्षी देते हैं कि हसन के पुत्र मुहम्मद वास्तव में जाबुल्का में थे जहाँ से वे प्रकट हुए। इसी तरह “वह जिसे ईश्वर प्रकट करेगा” वह भी तब तक उस नगरी का निवासी रहेगा जब तक ईश्वर उसे अपनी सम्प्रभुता के सिंहासन पर विराजमान रखेंगे। हम वस्तुतः इस सत्य को स्वीकार करते हैं और उनमें से हर एक के प्रति अपनी निष्ठा रखते हैं। जाबुल्का का अर्थ बताने में हमने यहाँ संक्षिप्तता से काम लेने का निश्चय किया है लेकिन यदि तुम सचमुच आस्थावान हो तो तुम सत्य ही इन पातियों में निहित सभी रहस्यों के सही अर्थ समझ सकोगे।

50. लेकिन जहाँ तक उसकी बात है जो साठवें वर्ष में प्रकट हुआ, उसे न रूपांतरण की जरूरत है और न व्याख्या की, क्योंकि उसका नाम मुहम्मद था और वह धर्म के इमामों का वंशज था। अतः, जैसाकि तुम्हारे समक्ष स्पष्ट हो चुका है, उनके बारे में यह सचमुच कहा जा सकता है कि वे हसन के पुत्र थे। बल्कि यूँ कहें कि उसी ने उस नाम की रूप रचना की और अपने लिए उसका सृजन किया, बशर्ते कि तुम ईश्वर की दृष्टि से देख पाओ।

51. अब मेरी इच्छा है कि मैं इस विषय से हटकर यह वर्णन करूँ कि 'कुरान के बिंदु'[36] पर क्या बीती और उसके स्मरण की स्तुति करूँ ताकि शायद तुम्हें हर वस्तु में एक ऐसी अंतर्दृष्टि प्राप्त हो सके जिसका उद्भव उस अतुल्य, उस सर्वशक्तिमान से हुआ है।

52. कुरान के उस बिंदु के उन दिनों के बारे में विचार करो जब परमात्मा ने उसे अपने धर्म के प्रबर्द्धन के लिए तथा अपनी ही 'आत्मा' के प्रतिनिधि के रूप में आगे किया। देखो कि कैसे उस पर हमले किए गए और कैसे सबने मिलकर उसे अस्वीकृत कर दिया। जब उसने गलियों और बाज़ारों में कदम रखे तो कैसे लोगों ने उसकी हँसी उड़ाई, उसे देखकर हिकारत से अपने सिर हिलाए और उपहास करने के लिए उसकी खिल्ली उड़ाई और कैसे कदम-कदम पर उसकी जान लेने की कोशिश की। उन्होंने ऐसे-ऐसे कुकृत्य किए कि यह विशाल धरती भी उसे पनाह देने के लिए छोटी पड़ गई, स्वर्ग के सहचर भी उसकी स्थिति पर विलाप कर उठे, अस्तित्व की आधारशिलाएँ चरमरा उठीं और ईश्वर के साम्राज्य के कृपा-प्राप्त निवासियों के नयन आठ-आठ आँसू रो उठे। वास्तव में, इन निष्ठाहीन एवं दुष्ट लोगों ने उसे इतनी गहन यातनाएँ दीं कि उनकी दास्तान सुनकर कोई भी वफादार व्यक्ति सब्र खो बैठेगा।

53. यदि ये दिग्भ्रमित लोग अपने आचरण पर विचार करने के लिए ज़रा सा ठहर जाते, यदि उन्होंने इस हिमधवल 'तरुवर' की शाखाओं पर गायन करते 'रहस्यमय कपोत' का मधुर आलाप पहचाना होता, उसे स्वीकार किया होता जिसे ईश्वर ने उनके समक्ष वरदान स्वरूप प्रकट किया था और 'परमेश्वर के वृक्ष' की शाखाओं पर लटकते फलों की खोज की होती तो भी क्या वे उसे अस्वीकृत और अवमानित कर सकते थे ? ऐसे में क्या उसके अवतरण के लिए उन्होंने सिर उठाकर स्वर्ग से याचना

न की होती ? क्या हर पल वे ईश्वर से यह अभ्यर्थना न करते कि उन्हें उसके सौन्दर्य और उसकी उपस्थिति से गौरवान्वित होने का मौका मिले ?

54. किन्तु वे मुहम्मद की वाणी से निस्सृत ईश्वर के शब्दों और दिव्य रहस्यों तथा पवित्र संकेतों को पहचानने से चूक गए और उनकी सत्यता को स्वयं अपने दिलों में परखने की अपेक्षा उन्होंने उन मुल्लाओं का अनुसरण करना पसन्द किया जिन्होंने अतीत के धर्मयुगों में भी लोगों की प्रगति को अवरुद्ध किया था और भविष्य के धर्मचक्रों में भी ऐसा करते रहेंगे। इस तरह वे दिव्य उद्देश्य से एक पर्दे की तरह ओझल रहे, दिव्य धाराओं को वे छककर पी न सके और स्वयं को उन्होंने परमेश्वर की उपस्थिति, उसके सारतत्व के प्रकटीकरण और उसकी अनन्तता के दिवास्रोत से वंचित कर लिया। इस तरह वे भ्रमों के कुपथों में भटकते रहे, असावधानी के पथ पर विचरते रहे और उस नरकाग्नि की आग में धधकते घर के निवासी बने जिसका ईंधन उनकी अपनी ही आत्मा है। वे वस्तुतः उन आस्थाहीनों में गिने गए हैं जिनके नाम ईश्वर की लेखनी द्वारा उसके पवित्र ग्रंथ में अंकित हैं। उनका मित्र और सहायक न कभी कोई रहा है और न कभी कोई होगा।

55. यदि इन लोगों ने मुहम्मद के व्यक्तित्व में निरूपित ईश्वर रूपी दस्ते को थामा होता, यदि वे पूर्णत: ईश्वर की ओर उन्मुख हुए होते और धर्मगुरुओं से सीखी हुई बातों से उन्होंने स्वयं को मुक्त किया होता तो निश्चय ही उन्होंने (मुहम्मद ने) अपनी दया से उनका मार्गदर्शन किया होता और उन्हें अपनी अविनाशी वाणी में निबद्ध पावन सत्यों से सुपरिचित कराया होता। क्योंकि उनकी महानता और गरिमा से इस बात का दूर तक का भी वास्ता नहीं हो सकता कि वे अपने द्वार पर खड़े किसी याचक को भगा दें, उन पर भरोसा कर उनकी पावन देहरी पर आए किसी व्यक्ति को दुत्कार दें, अपने शरणागत को शरण में लेने से अस्वीकार कर दें, अपनी दया का आसरा ग्रहण किए व्यक्ति को अपनी कृपा से वंचित कर दें या अपनी समृद्धि के दरिया का ठिकाना पाने वाले अकिंचन को वहाँ से दूर भगा दें। मगर ये लोग ईश्वर की ओर पूर्णतः उन्मुख नहीं हो सके तथा सत्य रूपी भास्कर के उदित होने पर भी सबको समेटने वाली उसकी कृपा का आसरा ग्रहण करने से चूक गए। मार्गदर्शन की छाँह छोड़कर वे भ्रम की नगरी की ओर भाग चले। इस तरह वे स्वयं तो भ्रष्ट हुए ही, उन्होंने औरों को भी भ्रष्ट बना दिया। इस तरह वे स्वयं तो भ्रमित हुए ही, उन्होंने औरों को भी भ्रमित कर दिया। और इसीलिए स्वर्गिक ग्रंथ में उनका नाम अत्याचारियों की श्रेणी में लिखा गया।

56. अब जबकि यह क्षणभंगुर प्राणी अंतरंग रहस्यों की व्याख्या में इस महान बिन्दु तक आ चला है तो संक्षेप में यह भी बताया जाएगा कि इन बर्बर लोगों ने आखिर ऐसे इंकार क्यों किया, ताकि यह विवेक और अंतर्दृष्टि से सम्पन्न लोगों के लिए प्रमाणस्वरूप तथा निष्ठावानों के लिए मेरी करुणा का प्रतीक चिह्न हो।

57. तो तू यह जान कि जब 'कुरान के बिन्दु' और परम महिमामय परमेश्वर के प्रकाश-मुहम्मद सुस्पष्ट श्लोकों (आयतों) और ऐसे ज्योतिर्मय प्रमाणों के साथ अवतरित हुए जिन्हें अस्तित्व की सम्पूर्ण शक्तियाँ मिलकर भी प्रस्तुत नहीं कर सकतीं, तो उन्होंने ईश्वर से प्राप्त शिक्षाओं के अनुसार समस्त मानवजाति को इस उदात्त और प्रशस्त पथ का अनुगमन करने के लिए कहा। जिस किसी ने मुहम्मद को पहचाना, उसने उनके अंतरंग अस्तित्व में ईश्वर के संकेतों को पहचाना और उनके सौन्दर्य में परमात्मा की अपरिवर्तनशील सुन्दरता को निहारा। "पुनरुत्थान", "सबको एकत्रित किए जाने", "जीवन" और "स्वर्ग" के निर्णय उनके समक्ष उजागर हुए। क्योंकि जिस किसी ने ईश्वर और उसके प्रकटावतार में अपनी आस्था प्रकट की, उसे मानो असावधानी की कब्र से जगा दिया गया, उन्हें हृदय की पावन मनोभूमि में एकत्रित किया गया, निष्ठा और निश्चयात्मकता के जीवन से स्पंदित किया गया तथा दिव्य उपस्थिति के स्वर्ग में प्रवेश दिया गया। इससे भी उच्च स्वर्ग भला और क्या हो सकता है, इससे अधिक शक्तिशाली 'एकत्रीकरण' और इससे भी बड़ा 'पुनरुत्थान' भला और क्या ? वस्तुतः, यदि किसी को इन रहस्यों का ज्ञान दिया जाए तो वह ऐसी गुह्य बातों को जानेगा जिनकी थाह पाना अन्य किसी के लिए सम्भव नहीं।

58. अतः तू यह जान ले कि ईश्वर के दिवस में जिस स्वर्ग का अवतरण होता है वह अन्य सभी स्वर्गों से बढ़कर है और उन सबके यथार्थ से अधिक उत्कृष्ट। क्योंकि जब ईश्वर ने - धन्य और महिमावान है वह परमात्मा - उस व्यक्ति में अपने प्रकटावतार होने का परम पद सुनिश्चित कर दिया जो कि उनका 'मित्र', उनका 'चुना हुआ' व्यक्ति तथा उनके रचित जीवों के बीच उसका कोषालय था, जैसाकि गरिमा के साम्राज्य से प्रकट किया गया है: "किन्तु वह प्रभुदूत है और सभी अवतारों की मुहर,"[37] तो उस परमात्मा ने सभी लोगों से यह वादा किया कि वे पुनरुत्थान के दिवस में स्वयं उनका (परमात्मा का) सान्निध्य प्राप्त करेंगे। इसमें उनका निहितार्थ था आने वाले अवतार की महत्ता को रेखांकित करना क्योंकि वस्तुतः उसे सत्य की शक्ति द्वारा प्रकट किया गया था। और इसमें कोई संदेह नहीं कि इससे बड़ा कोई भी स्वर्ग नहीं

है, कोई भी पद इससे ऊँचा नहीं है, बशर्ते कि तुम कुरान की आयतों पर ज़रा विचार करो। धन्य है वह जो यह निश्चित रूप से जानता है कि वह उस दिवस में ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त करेगा जब उस परमात्मा का सौन्दर्य प्रकट किया जाएगा।

59. यदि मैं इस उदात्त विषय के संदर्भ में प्रकटित सभी श्लोकों का वर्णन करूँ तो पाठक का मन बोझिल हो जाएगा और हम स्वयं भी अपने उद्देश्य से भटक जाएँगे। अतः केवल निम्नांकित श्लोक ही पर्याप्त होगा। काश, तुम्हारे नयनों को उनसे सांत्वना मिले और तुम उस गौरव को प्राप्त करो जो उनमें संचित और निहित हैं: "वह परमात्मा ही है जिसने दृश्यमान स्तम्भों के बिना ही आकाश का वितान खड़ा किया है और फिर उस पर अपना आसन स्थापित किया तथा सूर्य और चन्द्रमा को नियमों से बाँधा जिनमें से प्रत्येक अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर जाता है। वह सभी वस्तुओं को आदेश देने वाला है। वह स्पष्ट करता है अपने चिह्नों को ताकि अपने प्रभु की सत्ता के बारे में तुम्हारे मन में सुदृढ़ आस्था बनी रहे।"[38]

60. अतः, हे मेरे मित्र! इस श्लोक में उल्लिखित "सुदृढ़ आस्था" नामक शब्दावली पर गौर करो। उसमें कहा गया है कि धरती और आकाश, सिंहासन, सूर्य और चन्द्रमा, इन सबको इसलिए रचा गया है कि उसके सेवक उसके युग में अपनी अडिग आस्था का परिचय दें। ईश्वर के पुण्य की सौगन्ध! हे मेरे बन्धु, इस पद की महानता के बारे में विचार कर और इस युग में ज़रा लोगों की दीन दशा तो देख कि कैसे वे ईश्वर की मुखमुद्रा और उसके सौन्दर्य से दूर भाग रहे हैं "मानों वे डरे-सहमे गधे"[39] हों। यदि तुम उस पर विचार कर सकते जिसे मैंने तुम्हारे समक्ष प्रकट किया है तो तुम निस्संदेह इस वाणी में निहित हमारे उद्देश्य को समझ लेते और इस दिव्य परिधि में मैंने तुम्हें जो प्रदान करना चाहा है उसे तुम तलाश कर पाते। कदाचित तुम्हारी आँखें उसका अवलोकन कर आनन्दित होतीं, उसमें निहित गायन को सुनकर तुम्हारे कानों को सुख मिलता, उसके अभिज्ञान से तुम्हारी आत्मा परमानन्द में आप्लावित होती, उसके बोध से तुम्हारा हृदय प्रकाशित होता और उससे उठती सुमधुर बयार के झोकों से तुम्हारी चेतना आह्लादित हो उठती। सम्भवतः तुम दिव्य कृपा के शिखरों को छू सकते और परातीत पवित्रता के रिज़वान में निवास कर पाते!

61. परन्तु जिसने ईश्वर को उसके यथार्थ रूप में नकार दिया है, जिसने उसकी ओर पीठ फेर ली है और विद्रोह किया है, जिसने अविश्वास किया है और उपद्रव मचाए हैं, उसके लिए 'अपवित्रता', 'ईश-निन्दा', 'मृत्यु' और 'आग' जैसे निर्णय दिए गए।

क्योंकि शैतान के साक्षात स्वरूप, विस्मृति के उपासकों तथा बगावत की आग सुलगाने वाले लोगों की ओर उन्मुख होने से बढ़कर ईश-निन्दा और क्या हो सकती है? जिस दिवस में सर्वशक्तिमान, परम दयालु, साक्षात परमेश्वर द्वारा प्रभुधर्म को नया रूप और नवजीवन दिया जा रहा हो, उस दिवस में अपने प्रभु को इंकार करने से बड़ी अपवित्रता क्या हो सकती है ? अनन्त जीवन के स्रोत से बचकर भागने से बड़ी मृत्यु और क्या होगी ? और उस न्याय के दिन में ईश्वरीय सौन्दर्य और स्वर्गिक गरिमा से दूर रहने से भी ज्यादा दहकती आग भला और क्या हो सकती है ?

62. मुहम्मद के युग में रहने वाले अरब के मूर्तिपूजक लोगों द्वारा उनके विरूद्ध विवाद खड़े करने और फतवे देने के लिए इसी तरह के शब्दों और ऐसी ही वाणियों का प्रयोग किया जाता था। वे कहते थे: "जो लोग मुहम्मद में आस्था रखते थे वे हमारे ही बीच के लोग थे और दिन-रात हमसे ही उन"का वास्ता पड़ता था। आखिर वे मर कब गए और उन्हें पुनर्जीवित कब किया गया? इसके उत्तर में जो कहा गया उस पर ध्यान दो: "यदि तुम कभी आश्चर्य का अनुभव करो तो सचमुच उनका यह कहना आश्चर्यजनक ही है, 'क्या! जब हम धूल में मिल जाएँगे और हमारी हड्डियों का नामो-निशान तक मिट चुका होगा' तब भी क्या हमारा नए सिरे से सृजन होगा?"[40] और एक अन्य अनुच्छेद में कहा गया: "और यदि तुम यह कहो कि 'मृत्यु के बाद हमें बेशक नवजीवन मिलेगा' तो निष्ठाहीन लोग निश्चित रूप से यह बोल उठेंगे: 'यह और कुछ नहीं बल्कि सीधी-सपाट जादूगरी है'।"[41] इस तरह उन्होंने उसकी खिल्ली उड़ाई, उसका उपहास किया, क्योंकि उन्होंने "जीवन और मृत्यु" जैसे शब्द अपने ग्रंथों में पढ़ रखे थे और अपने धर्माधिकारियों से उनके बारे में सुन रखा था और उनसे उन्होंने इसी तात्विक जीवन और शारीरिक मृत्यु का अर्थ निकाला और इस तरह जब उन्होंने अपने निरर्थक विचार तथा अपने भ्रामक एवं दुष्ट मस्तिष्क की संकल्पनाओं को साकार होते नहीं देखा तो वे विवाद के परचम और बगावत के झंडे लेकर उठ खड़े हुए और युद्ध की लपटें सुलगा बैठे। लेकिन ईश्वर ने अपनी शक्ति से उस ज्वाला को बुझा दिया, जैसाकि तुम पुनः इस युग में इन दुष्टों और निष्ठाहीनों के प्रसंग में देख सकते हो।

63. इस बेला में जबकि अनन्त नगरी से मेरे ऊपर आकर्षण की मोहक सुरभि बहाई गई है, जबकि इराक के क्षितिज पर लोकों के दिवानक्षत्र के प्रभात काल में आभाओं की

भूमि से उत्कंठा के समीरणों ने मुझे भावाभिभूत कर दिया है और हिज़ाज की असीम मधुरताओं ने मेरे कानों में वियोग के रहस्यों को घोल दिया है, मेरी इच्छा है कि जीवन और मृत्यु के वास्तविक अर्थ के बारे में 'रहस्यमय कपोत' ने स्वर्ग के हृदय में जो गायन किया है उससे मैं तुम्हें अवगत कराऊँ, यद्यपि यह कार्य असम्भव प्रतीत होता है। क्योंकि यदि मैं इन शब्दों का अर्थ तुम्हारे समक्ष वैसे ही प्रकट करूँ जैसा कि उन्हें 'संरक्षित पाती' में प्रकट किया गया है तो संसार के सभी ग्रंथ और सारे पन्ने भी उसे समेट नहीं पाएँगे और न ही मानव-आत्माएँ उनका भार झेल सकेंगी। तथापि मैं उसका उल्लेख करूँगा जो इस दिवस, इस युग के समीचीन है, ताकि यह उनके लिए एक मार्गदर्शक तत्व बन सके जिनके मन में स्वर्गलोक में गरिमा की विश्रान्ति में प्रवेश करने, इस स्वर्गिक और रहस्यमय विहग द्वारा चेतना के माधुर्य भरे गायन को सुनने तथा उन लोगों में गिने जाने की लालसा हो जो ईश्वर के सिवा अन्य सब से विमुक्त हो चुके हों और जो इस युग में अपने प्रभु के सान्निध्य में आनन्दित हों।

64. तो तुम यह जानो कि 'जीवन' का दोहरा अर्थ है। पहले अर्थ का सम्बंध एक तात्विक शरीर के साथ मनुष्य के प्रकट होने से है - एक ऐसे रूप में जो तुम्हारे एवं सब के लिए दोपहर के सूर्य की तरह स्पष्ट दिखता है। शारीरिक मृत्यु के साथ ही, जो कि ईश्वर द्वारा निर्धारित एक अपरिहार्य सत्य है, इस जीवन का अंत हो जाता है। लेकिन वह जीवन जिसका उल्लेख अवतारों एवं ईश्वर के चुने हुए दूतों के ग्रंथों में किया गया है, वह है ज्ञान रूपी जीवन, अर्थात सेवक द्वारा उन प्रभासित संकेतों का अभिज्ञान जिनसे समस्त आभाओं के स्रोत परमेश्वर ने स्वयं ही उसे विभूषित किया है, तथा ईश्वर के धर्म के प्रकटावतारों के माध्यम से ईश्वर को प्राप्त करने का उसका निश्चय। यह एक आशीर्वादित एवं अनन्त जीवन है जो सतत् अविनाशी है। जो कोई इस जीवन की त्वरा से स्पंदित हुआ है उसकी मृत्यु कदापि नहीं होगी, बल्कि वह तब तक अक्षुण्ण रहेगा जब तक उसके प्रभु और उसके स्रष्टा का अस्तित्व बना रहेगा।

65. तात्विक शरीर से सम्बंधित प्रथम जीवन का एक दिन अंत हो जायेगा, जैसा कि ईश्वर द्वारा कहा गया है: "हर किसी को मृत्यु का स्वाद चखना होगा।"[42] लेकिन दूसरा जीवन, जिसका उद्गम ईश्वर के ज्ञान से होता है, मृत्यु द्वारा कभी स्पर्शित

नहीं होता, जैसाकि पूर्व में कहा गया है: "उसे हम निश्चिय ही आशीर्वादित जीवन के स्पंदन से भर देंगे।"[43] और शहीदों से सम्बंधित एक अन्य पाती में कहा गया है: "नहीं, वे जीवित हैं और उनके अवलम्बन हैं परमात्मा।"[44] और परम्परागत वाणी के अनुसार: "वह जो कि सच्चा अनुयायी है, वह इस लोक तथा परलोक दोनों ही में जीवित रहता है।"[45] ईश्वर तथा उसके न्याय के मूर्तिमंत अवतारों के ग्रंथों में ऐसी ही असंख्य वाणियों के उदाहरण मिल जाएँगे। लेकिन संक्षिप्तता की दृष्टि से हमने केवल उपरोक्त अनुच्छेदों से ही संतोष कर लिया है।

66. हे मेरे बन्धु! अपनी इच्छाओं को त्याग दे, अपना मुखड़ा अपने स्वामी की ओर कर और उनके पथों का अनुसरण न कर जिन्होंने अपनी भ्रष्ट प्रवृत्तियों को ही अपना देवता बना लिया है, ताकि कदाचित तू अस्तित्व के केन्द्र में, उसकी मुक्तिदायिनी छाया तले शरण पा सके जो सभी नामालंकरणों का प्रशिक्षक है। क्योंकि जो कोई भी इस युग में अपने प्रभु से विमुख होते हैं उनकी गिनती मृतकों में की गई है। हालाँकि बाहर से देखने पर तो वे चलते-फिरते नज़र आते हैं, बहरों के बीच उन्हें सुनाई भी पड़ता है और अंधों के बीच वे देखने की क्षमता से सम्पन्न हैं मगर जैसाकि न्याय-दिवस के सम्प्रभु स्वामी द्वारा स्पष्ट कहा गया है: "वे ऐसे हृदय से सम्पन्न हैं जो समझ नहीं सकते और ऐसी आँखों से जो देख नहीं सकतीं.....।"[46] वे एक खतरनाक तट के छोर पर विचरण कर रहे हैं और दहकती अतल गहराई के किनारे चल रहे हैं।[47] वे इस तरंगित रत्नाकर की लहरों के खजाने त्यागकर अपने ही निरर्थक विचारों में निमग्न हैं।

67. इस संदर्भ में हम तुम्हें वह बताएँगे जिसे अतीत काल में "जीवन" के बारे में प्रकट किया गया था, ताकि तुम कदाचित् स्वार्थ के बहकावों से मुक्त हो सको, इस अंधकारमय जगत में अपने कारागार के संकीर्ण दायरों से बाहर निकल सको और तुम्हें सहायता प्राप्त हो सके ताकि तुम उनमें से बन सको जिन्हें इस अंधकारमय विश्व में सही मार्गदर्शन प्रदान किया गया है।

68. उसका वचन है और वह वस्तुतः सत्य कहता है: "क्या वह मृतक जिसे हमने जीवन की त्वरा से स्पंदित किया है और जिस लिए हमने वह प्रकाश निर्धारित किया है जिसके माध्यम से वह लोगों के बीच विचरण कर सकेगा, उस व्यक्ति की तरह कभी हो सकता है जिसका अस्तित्व उस अंधकार में है जिससे उभरकर वह कभी बाहर

नहीं आ सकता ?''[48] यह श्लोक हमज़िह और अबू-जहल के सम्मान में प्रकट किया गया था जिनमें से हमज़िह एक आस्थावान व्यक्ति था और अबू-जहल आस्थाहीन। ज्यादातर मूर्तिपूजक धर्मगुरुओं ने इसकी खिल्ली उड़ाई और इसका उपहास किया। वे उग्र हो उठे और यह कोलाहल मचाया: ''हमज़िह भला मरा कैसे ? और उसे नवजीवन कैसे मिला ?'' अगर तुम ईश्वर के श्लोकों को समुचित कसौटी पर कसकर देख सको तो तुम्हें पवित्र ग्रंथ में ऐसे ही कई बयान दर्ज मिलेंगे।

69. काश वे शुद्ध और निष्कलुष हृदय मिल पाते कि मैं उन पर ज्ञान के महासागर की जलधाराओं का अभिसिंचन कर पाता जो मुझे मेरे प्रभु ने प्रदान किया है, ताकि वे उच्च आकाश में उसी तरह विचरण कर पाते जैसे इस धरती पर कदम रखते हैं और उसी द्रुत गति से पानी पर चल पाते जैसे जमीन पर और अपने प्राण अपनी हथेली पर रखकर अपने सृष्टिकर्ता के पथ पर निसर्ग कर पाते। परन्तु इस शक्तिशाली रहस्य को प्रकट करने की अनुमति नहीं दी गई है। वस्तुतः, यह अनन्तकाल से उस परम प्रभु की शक्ति के कोषालयों में निहित एक रहस्य रहा है और उसकी सामर्थ्य के आगार में प्रच्छन्न एक निगूढ़ विषय, ताकि कहीं ऐसा न हो कि उसके निष्ठावान सेवक अनन्तता के साम्राज्य में इस परम महान पद को पाने की आशा में अपना जीवन ही त्याग दें, न ही कभी वे लोग उसे प्राप्त कर सकेंगे जो इस यातना भरे अंधकार में भटक रहे हैं।

70. हे मेरे बंधु! हमने हर कालचक्र में अपना विषय दोहराया है ताकि ईश्वर की इच्छा से इस श्लोक में आकलित हर रहस्य तुम पर प्रकट हो सके और तुम उन लोगों से मुक्त हो सको जो स्वार्थ के अंधकार में निमग्न हैं और जो धृष्टता तथा अभिमान की घाटी में चल रहे हैं और तुम उन लोगों में से बन सको जो अनन्त जीवन के स्वर्ग में विचरण करते हैं।

71. कहोः हे लोगों! सचमुच, 'जीवन तरुवर' को दिव्य स्वर्ग के बीचोंबीच रोप दिया गया है और उससे चहुँओर जीवन का विस्तार हो रहा है। तुम भला उसे समझने और पहचानने से कैसे चूक सकते हो ? वास्तव में यह तुम्हें दिव्य रहस्यों के उन समस्त सार-तत्वों को समझ पाने में मदद करेगा जिसे मुझ जैसी आश्वस्त आत्मा ने तुझ पर प्रकट किया है। पावनता का कपोत अमरता के आकाश में कलरव कर रहा है और वह तुम्हें चेतावनी देता है कि तू इस्पात से बने नए वस्त्राभूषण पहन ले ताकि तू उन लोगों के संकेत-संदर्भों में छिपे सन्देह के बाणों से बच सके, जो यह

कहते हैं कि: ''सिवाय उस व्यक्ति के जिसका जन्म जल और चेतना से हुआ हो, और कोई भी ईश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं पा सकता। इस बात पर आश्चर्य न कर कि मैंने तुझसे कहा था कि अवश्य ही तू पुनः जन्म लेगा।''[49]

72. अतः तू इस दिव्य तरुवर की ओर उड़ान भर और इसके फलों का आस्वादन ग्रहण कर। जो कुछ भी उसकी शाखाओं से टूट कर गिरा है उन्हें एकत्रित कर और निष्ठापूर्वक सहेज ले। और तब उस अवतार की वाणी पर ध्यान दे जिसने मानवात्माओं को अपने प्रच्छन्न संकेतों और गुप्त प्रतीकों के द्वारा अपने बाद आने वाले प्रभुदूत का सुसमाचार सुनाया था, ताकि तू पक्के तौर पर यह जान ले कि उनके शब्द सभी लोगों के लिए अपरीक्षेय हैं सिवाय उनके जो समझने योग्य हृदय से सम्पन्न हैं। उसने कहा है: ''उसकी आँखें अग्नि की लपटों की तरह थीं'' और ''उसके पैर पीतल जैसे थे'' और यह कि ''उसके मुँह से दोधारी तलवार निकलती है।''[50] इन शब्दों का शाब्दिक अर्थ भला क्या निकाला जा सकता है ? यदि कोई इन सभी संकेतों के साथ अवतरित होता तो वह शायद ही मनुष्य हो सकता था। कोई व्यक्ति भला कैसे उसके सामीप्य की कामना भी करता ? बल्कि यूँ कहें कि ऐसा व्यक्ति यदि किसी नगर में प्रकट हो तो अगले शहर के निवासी भी वहाँ से भाग खड़े होंगे और कोई भी व्यक्ति उसके निकट आने का दुस्साहस नहीं कर पाएगा! परन्तु यदि तुम इन कथनों पर गहन विचार करो तो तुम्हें लगेगा कि उसकी वाणी ऐसी विलक्षण क्षमता-सम्पन्न और सुस्पष्ट होगी कि वह शब्दों की उत्तुंगतम ऊँचाइयाँ को छू रही होगी और वह विवेक का मूर्तिमंत स्वरूप होगा। मेरी दृष्टि में, उन्हीं से अभिव्यक्ति के सूर्य प्रकट हुए हैं तथा स्पष्टता के सितारों ने उभर कर अपनी प्रभा बिखेरी है।

73. अतः अतीत और वर्तमान के उन मूर्खों पर दृष्टि डाल जो ऐसे किसी अवतरण की प्रतीक्षा में बैठे हैं। यदि वह अवतार उपरोक्त स्वरूप में प्रकट न हो तो वे हरगिज उसके प्रति निष्ठावान नहीं होंगे। और चूँकि ऐसे किसी अवतार का प्रादुर्भाव हो ही नहीं सकता इसलिए वे कभी विश्वास करेंगे ही नहीं। तो इन विकृत और नास्तिक जनों की समझ का पैमाना कुछ ऐसा ही है! वे लोग जो कि स्पष्ट से भी स्पष्ट और प्रकट से भी प्रकट को पहचानने से चूक जाते हैं, वे भला दिव्य उपदेशों के जटिल यथार्थों तथा उस परमात्मा की अनन्त प्रज्ञा के रहस्यों के सारतत्व को कभी कैसे समझ सकेंगे ?

74. अब मैं इस वाणी के सत्यार्थ पर संक्षिप्त प्रकाश डालूँगा ताकि तू इसके निहित रहस्यों को जान सके और बोधसम्पन्न लोगों में से एक हो सके। अतः अब हम तुम्हारे

सामने जो प्रकट करेंगे उसकी तू अच्छी तरह परीक्षा कर ले और सही निर्णय कर ताकि तू कदाचित ईश्वर की दृष्टि में उन लोगों में से गिना जा सके जो इन विषयों में सही प्रज्ञा से सम्पन्न हैं।

75. यह जान कि जिसने गरिमा के साम्राज्य में इन शब्दों का उच्चारण किया उसका आशय था उस अवतरण के गुणों का वर्णन करना जो ऐसे निगूढ़ एवं जटिल स्वरूप में प्रकट होगा कि भ्रमित लोग उसे पहचान नहीं सकेंगे। अतः जब उसने कहा कि "उसकी आँखें अग्नि की लपटों की तरह थीं" तो उसने उस प्रतिज्ञापित अवतार की दृष्टि की प्रखरता और प्रवणता की ओर संकेत किया जो अपनी दृष्टि से हर पर्दे, हर आवरण को जला डालेगा, जो इस क्षणभंगुर संसार में निबद्ध अनन्त रहस्यों को प्रकट करेगा तथा नरक की धूल में ढँके हुए मुखड़ों तथा स्वर्ग की ज्योति से प्रभासित चेहरों के बीच का अन्तर स्पष्ट करेगा।[51] यदि उसकी आँखें परमात्मा की प्रज्वलित अग्नि की बनी न होतीं तो वह समस्त आवरणों तथा लोगों ने जो समेट रखे हैं उस सबको कैसे भस्म कर पाता ? ईश्वर के नामालंकरणों के साम्राज्य और सृष्टि के जगत में वह परमात्मा के संकेतों को कैसे देख पाता ? वह हर वस्तु को परमेश्वर की सर्वभेदक दृष्टि से कैसे निहार पाता ? इस तरह हमने उसे इस युग में ऐसी बेधक दृष्टि से सम्पन्न बनाया है। काश तुम ईश्वरीय श्लोकों में विश्वास कर पाते! क्योंकि, वास्तव में, उसके नेत्रों के 'सिनाई' में चमकती ज्वाला से अधिक उग्र और कौन सी आग हो सकती है, जिससे वह लोगों के समस्त आवरणों को जला डालता है ? उसकी दोषरहित पातियों में आदि और अंत के रहस्यों के बारे में, जबकि उस 'आह्वानकर्ता' का आह्वान मुखरित होगा और हम सब उसकी ओर लौट जाएँगे, जो कुछ भी प्रकट किया गया है, ईश्वर उन सबसे कहीं परे, अपरिमेय रूप से महान है।

76. और जहाँ तक इन शब्दों की बात है कि "उसके पैर पीतल जैसे थे", इसका अर्थ है उसे आज्ञा देने वाले ईश्वर की यह वाणी सुनने के बाद उसके द्वारा दर्शायी गई सुस्थिरता कि: "तुझे जो आज्ञा मिली है उसमें दृढ़ रह।"[52] वह ईश्वर के धर्म में इस तरह सतत् प्रयत्नशील रहेगा तथा उसकी शक्ति के पथ पर ऐसी दृढ़ता का परिचय देगा कि यदि धरती और स्वर्ग की सभी शक्तियाँ उसे मानने से इन्कार कर दें तो भी वह अपने धर्म की घोषणा से डगमगाएगा नहीं और न ही ईश्वर के विधानों की घोषणा करने में उसके आदेशों से मुँह मोड़े। बल्कि, वह उच्चतम पर्वतों और श्रृंगों की

तरह अडिग खड़ा रहेगा। ईश्वर की आज्ञा के पालन में वह अविचल रहेगा तथा उसके धर्म के प्राकट्य और उसकी वाणी की घोषणा में दृढ़ प्रतिज्ञ। कोई भी बाधा उसे बाधित नहीं कर सकेगी और न ही दुष्टजनों की आलोचनाएँ और निष्ठाहीनों की अस्वीकृतियाँ ही उसे विचलित कर पाएँगी। हर घृणा, हर अस्वीकृति, हर अन्याय और हर अविश्वास ईश्वर के प्रति उसके प्रेम को ही सुदृढ़ करेगा, उसके हृदय की ललक को तेज करेगा, उसकी आत्मा के आनन्द को और प्रबल बनाएगा और उसके अंतर्मन को भावप्रवण आस्था से भर देगा। क्या इस संसार में तुमने पीतल को इससे भी अधिक मजबूत, ब्लेड को इससे भी अधिक धारदार या पर्वत को इससे भी अधिक दृढ़ पाया है ? वह सचमुच धरती के सभी निवासियों से मुकाबला करने के लिए अपने पैरों पर खड़ा होगा और जैसाकि तुम जानते हो, वह किसी से भी भयभीत नहीं होगा, चाहे लोग उसके विरुद्ध कुछ भी कर गुजरने को तत्पर हो जाएँ। महिमा हो ईश्वर की जिसने उसे सुदृढ़ बनाया है और उसका आह्वान किया है। ईश्वर वह सब कुछ करने में समर्थ है जो उसकी इच्छा है। वह वास्तव में संकट में सहायक, स्वयंजीवी है।

77. और उसने आगे यह कहा है कि ‘‘उसके मुँह से दोधारी तलवार निकलती है।’’ तू यह जान कि तलवार दो टुकड़ों में कर देने वाला हथियार है और चूँकि अवतारों और प्रभु के चुने हुए जनों के मुख से वह वाणी निकलती है जो धर्मानुयायियों, निष्ठाहीनों और प्रेमियों को अपने प्रियतम से अलग-अलग करके रख देती है अतः उनके लिए इसी शब्दावली का प्रयोग किया गया है। इस विभाजन और पृथकीकरण की शक्ति की ओर संकेत करने के सिवा और कोई आशय नहीं है। अतः वह जो कि ‘आदि बिंदु’ है, जो अनन्त ‘सूर्य’ है, जब वह ईश्वर की अनुमति से समस्त सृष्टि को एकत्रित करने की कामना करता है, जब उन्हें उनके ‘स्व’ की कब्र से उठाना और उनके पारस्परिक अन्तर को प्रकट करना चाहता है तो उसे परमात्मा की ओर से सिर्फ एक आयत या श्लोक पढ़ने की देर भर होती है और यही आयत आज के युग से लेकर ‘पुनरुत्थान के दिवस’ तक सत्य को भ्रम से पृथक करती रहेगी। इस दिव्य तलवार से अधिक तेज और कौन सी तलवार हो सकती है और कौन सी धार इस विशुद्ध इस्पात से भी अधिक तीक्ष्ण हो सकती है जो कि हर बंधन को काटकर रख दे और जो धर्मानुयायी को निष्ठाहीनों से, पिता को पुत्र से, भाई को बहन से और प्रेमी को प्रियतम से पृथक करके रख दे?[53] क्योंकि जो कोई भी उसमें विश्वास करता

है जो कि उसके समक्ष प्रकट किया गया है वही सच्चा अनुयायी है और जो कोई भी उससे विमुख होता है वह निष्ठाहीन है और उनके बीच ऐसा बाध्यकारी विभेद उत्पन्न होगा कि इस संसार में एक-दूसरे के साथ उनका सहयोग और मेलजोल ही बन्द हो जाएगा। यही बात पिता और पुत्र के बीच होगी क्योंकि अगर पुत्र धर्मानुयायी और पिता नास्तिक होगा तो उन्हें पृथक कर दिया जाएगा और वे सदासर्वदा के लिए एक-दूसरे से वियुक्त हो जाएँगे। बल्कि, तुम तो यह भी देखते हो कि कैसे पुत्र पिता को और पिता पुत्र को मार डालता है। हमने तुमसे जो कुछ भी कहा है और जिन चीजों की भी व्याख्या की है उन सब पर इसी आलोक में विचार कर।

78. यदि तुम समस्त वस्तुओं को विवेक की दृष्टि से देख पाते तो तुम्हें सचमुच यह दिखाई पड़ता कि इस दिव्य तलवार ने पीढ़ियों को दो टूक करके रख दिया है। काश तुम इसे समझ पाते! यह सब कुछ पृथकीकरण के शब्द की महिमा से है जिसे न्याय और पार्थक्य दिवस पर प्रकट किया गया है, काश लोग अपने प्रभु के दिवसों में सावधान हो पाते! नहीं, बल्कि तुम अपनी दृष्टि को तीक्ष्ण बना पाते और अपने हृदय को शुद्ध कर पाते तो यह देखते कि वे सभी भौतिक तलवारें जिन्होंने हर युग, हर दिवस में विश्वासघातियों को मार गिराया है और पतितों के विरूद्ध जेहाद छेड़ा है, इसी दिव्य और अदृश्य तलवार से उत्पन्न हुई हैं। अतः अपनी आँखें खोल ताकि हमने जो कुछ भी तुम्हारे समक्ष प्रकट किया है उन्हें तू देख सके और वह प्राप्त कर सके जो कि पहले किसी अन्य ने प्राप्त नहीं किया है। हम सत्य ही कहते हैं: ‘‘स्तुति हो परमात्मा की, जो संगणना के दिवस का प्रभु है।’’[54]

79. हाँ, चूँकि ये लोग ज्ञान के सच्चे स्रोत और निर्झर तथा ईश्वर की आज्ञा से विशुद्ध एवं निष्कलंक हृदयों से निस्सृत ताज़े एवं मन्द प्रवाह वाले जल के महासागर से सच्चा ज्ञान प्राप्त करने से चूक गए हैं, अतः परमात्मा ने इन शब्दों और संकेतों के माध्यम से जो कहना चाहा है उसे समझने से उन्होंने उन लोगों को बाधित कर दिया है और वे अपने ही अहं के कारागार में बंद होकर रह गए हैं।

80. परमेश्वर ने अपनी दया के रूप में हमें जो प्रदान किया है उसके लिए हम उन्हें धन्यवाद देते हैं। उस प्रभु ने ही हमें अपने धर्म की सत्यता के प्रति आश्वस्त किया है, उस धर्म की सत्यता के प्रति जिसे रोक पाने में धरती और आकाश की शक्तियाँ मिलकर भी सक्षम नहीं हो सकतीं। उस प्रभु ने ही हमें उसकी उपस्थिति के इस युग

में स्वयं को स्वीकारने में सक्षम बनाया है, उसे प्रमाणित करने योग्य बनाया है जिसे बाद की पुनरुत्थान बेला में ईश्वर प्रकट करेंगे और हमें उन लोगों में से होने का गौरव प्रदान किया है जिन्होंने उसके प्राकट्य से पूर्व ही उसमें अपनी आस्था जताई है, ताकि उसकी कृपा हम पर तथा समस्त मानवजाति पर पूर्ण हो सके।

81. परन्तु, हे मेरे बंधु! जरा उन लोगों के खिलाफ मेरे शिकवे तो सुन जो दावा तो करते हैं ईश्वर और उसके ज्ञान के प्राकट्य के साथ जुड़े होने का, मगर फिर भी अपनी भ्रष्ट प्रवृत्तियों में ही लीन रहते हैं, अपने पड़ोसी का माल हड़पते हैं, जो शराबी हैं, हत्यारे हैं, एक-दूसरे को छलते और बदनाम करते हैं, ईश्वर की निन्दा करने और झूठ बोलने में निरत रहते हैं। लोग इन सारे कारनामों की जिम्मेदारी हमारे सिर डालते हैं जबकि इन कृत्यों का असली सरगना परमात्मा के सम्मुख निर्लज्ज बना रहता है। जो कुछ उस परमात्मा ने उनके लिए निर्धारित किया है उसे वे त्याग देते हैं और जो कुछ उसने निषिद्ध किया है वही कार्य करते हैं। फिर भी सत्य के अनुगामी लोगों के लिए यही उचित है कि उनके मुखड़े पर विनम्रता की प्रभा विराजनी चाहिए और उनकी मुखमुद्रा से पावनता की ज्योति प्रभासित होनी चाहिए ताकि वे इस धरा-धाम पर इस प्रकार विचरण करें मानो वे ईश्वर के साथ चल रहे हों तथा अपनी करनी से धरती के सभी निवासियों की तुलना में अपनी विशिष्टता झलकाएँ। उनकी स्थिति तो ऐसी होनी चाहिए कि उनकी आँखें ईश्वर की शक्ति के प्रमाणों को देखें, उनकी जिह्वा और उनका हृदय परमेश्वर के नाम का स्मरण करें, उनके चरण उसकी निकटता के स्थल की ओर प्रयाण करें और उनके हाथ उसकी शिक्षाओं का दामन थाम लें और यदि उन्हें विशुद्ध स्वर्ण की घाटियों और बहुमूल्य चाँदी की खानों से भी गुज़रना पड़े तो भी वे इन वस्तुओं को ज़रा भी ध्यान देने योग्य न मानें।

82. परन्तु इन लोगों ने तो इन सभी वस्तुओं से मुँह मोड़ लिया है और इसके बदले अपना लगाव उन वस्तुओं की ओर लगा रखा है जो उनकी भ्रष्ट प्रवृत्तियों के अनुकूल हैं। इस तरह वे घमंड और धृष्टता के बियावान में भटक रहे हैं। मैं इस क्षण इस बात का साक्षी हूँ कि ईश्वर तथा हम उन सबसे सर्वथा विमुक्त हैं। ईश्वर से हमारी यही याचना है कि हमें इस जीवन या उस लोक के जीवन में कभी भी उनकी संगति में न रहना पड़े। वह, वस्तुतः, अनन्त सत्य है। उसके सिवा अन्य कोई ईश्वर नहीं है और उसकी सम्प्रभुता हर वस्तु पर भारी है।

83. अतः हे मेरे बंधु! उस जीवन्त जल से अपना भाग ग्रहण कर जिसे हमने इन शब्दों के महासिन्धु में प्रवाहित किया है। मुझे लगता है कि उनमें गरिमा का उत्ताल महासागर तरंगित हो रहा है और दिव्य गुणों के मणि-मुक्ता अपनी चमक बिखेर रहे हैं। अतः उन वस्त्राभरणों को उतार फेंक जो तुझे इस अथाह लालिमायुक्त महासिन्धु में गोते लगाने से रोक रहे हैं, तथा "ईश्वर के नाम पर और उसकी करुणा के दम पर" की गई मुनादी के साथ इसकी गहराइयों में निमग्न हो जा। किसी से भी डर मत। अपने प्रभु, परमात्मा में विश्वास रख क्योंकि जो कोई भी उसमें विश्वास रखता है उसके लिए वह पर्याप्त है। वह, सत्य ही, तुम्हारी रक्षा करेगा और उसमें तू सुरक्षा के साथ निवास कर।

84. और तू यह भी जान ले कि इस परम पुनीत, ज्योतिर्मय नगरी के मुसाफिर को तू हर व्यक्ति के सम्मुख विनम्र और हर वस्तु के समक्ष विनीत पाएगा, क्योंकि वह ऐसे किसी को नहीं देखता जिसमें उसे ईश्वर के दर्शन न होते हों। इस सृष्टि रूपी 'सिनाई' पर्वत को आच्छादित करने वाले ईश्वरीय प्रकटीकरणों की ज्योतियों में उसे परमात्मा की प्रदीप्त गरिमा के दर्शन होते हैं। इस परम पद को पाने वाले पथिक को चाहिए कि वह किसी भी सभा में प्रतिष्ठित आसन का दावेदार न बने और न ही दूसरों के सम्मुख अपना बड़प्पन जताने का प्रयास करे। बल्कि उसे यह समझना चाहिए कि वह हर क्षण अपने प्रभु के साथ खड़ा है। औरों के लिए उसे ऐसी कोई कामना नहीं करनी चाहिए जो वह अपने लिए न चाहता हो, न ही उसे ऐसा कुछ भी बोलना चाहिए जो वह स्वयं अपने बारे में कहा जाना सहन नहीं करेगा और फिर उसे किसी भी आत्मा के लिए ऐसी कोई चाह नहीं रखनी चाहिए जिसकी चाहत उसे खुद अपने लिए कभी न हो। बल्कि उसके लिए तो यही शोभनीय है कि वह इस धरा-धाम पर परमात्मा की इस नव्य सृष्टि में अविचल पगों से चले।

85. और यह भी जान कि इस यात्रा के आरम्भ में साधक उन परिवर्तनों और रूपांतरणों को देखता है जिनका ज़िक्र पहले किया जा चुका है। यह निस्संदेह सत्य है जैसाकि उन दिनों के संदर्भ में प्रकट किया गया है: "उस दिन जबकि यह धरती एक अन्य धरती में बदल दी जाएगी।"[55] ये सचमुच वे दिन हैं जैसे किसी भी नश्वर नयनों ने पहले कभी नहीं देखे। धन्य है वह जो इस उच्चता तक पहुँचता है और उनके सम्पूर्ण मूल्य का अनुभव करता है। "हमने मूसा को अपने संकेतों के साथ भेजा था और उससे कहा था: "अपने लोगों को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाओ और उन्हें

ईश्वरीय दिवसों का स्मरण दिलाओ।"[56] और ये सत्य ही ईश्वर के दिवस हैं, काश तुम इसे जान पाते!

86. इस अवस्था तक पहुँचने के बाद, सभी परिवर्तनशील वास्तविकताएँ तुम्हारे सामने प्रकट कर दी जाएँगी। जो कोई इस सत्य से इंकार करता है उसने वस्तुतः प्रभुधर्म से अपना मुँह मोड़ा है, उसने परमात्मा के नियमों से विद्रोह किया है और उसकी सम्प्रभुता का खंडन किया है। क्योंकि जो इस धरती को दूसरी धरती में बदल सकता है उसमें वस्तुतः धरती के सभी निवासियों को रूपांतरित करने की शक्ति भी है। अतः इस पर आश्चर्य न कर कि वह कैसे अंधकार को प्रकाश में और प्रकाश को अंधकार में, अज्ञान को ज्ञान और भ्रम को मार्गदर्शन में, मृत्यु को जीवन में और जीवन को मृत्यु में बदल देता है। यही वह अवस्था है जिसमें प्रवेश कर रूपांतरण का नियम प्रभावी हो उठता है। यदि तू इस पथ का राही है तो इस पर विचार कर कि तूने इस उन्मत्त प्राणी से जो भी सवाल किए हैं वे तुम्हारे समक्ष स्पष्ट किए जा सकें और तू इस मार्गदर्शन के वितान तले निवास कर सके। वह जैसा चाहता है वैसा करता है और उसकी जैसी इच्छा होती है वह उसी के अनुरूप आदेशित करता है। उससे उसके कर्मों का हिसाब लेने वाला कोई नहीं है परन्तु हर मनुष्य को अपके कर्मों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करने को कहा जाएगा।[57]

87. हे मेरे बन्धु! इस अवस्था तक पहुँचने के बाद, जो कि यात्रा के आरम्भ का द्योतक है, तुम अनेक पदों और विभिन्न संकेतों के साक्षी बनोगे - ठीक वैसे ही जैसा कि खोज की नगरी के संदर्भ में उल्लिखित किया गया है। अपने-अपने स्तरों के परिप्रेक्ष्य में ये सब सच हैं। इस पद को पाने के बाद तुम्हारे लिए यह उचित है कि तू हर सृजित वस्तु पर उसकी यथास्थिति में विचार कर। उनके वास्तविक पद को न तो कम करके आँक और न ही बढ़ा-चढ़ाकर। उदाहरण के लिए, यदि तू अदृश्य जगत को इस सृष्टि के दायरे में ले आए तो यह घोर ईश-निन्दा का विषय होगा और यदि इस सृष्टि को अलौकिक विश्व से तुलनीय माने तो यह भी एक अपवित्र कार्य होगा। परन्तु यदि तुम अदृश्य जगत और इस सृष्टि का वर्णन उनके अपने सापेक्ष दायरों में करे तो यह एक निर्विवाद सत्य होगा। दूसरे शब्दों में, यदि तुम दिव्य एकता के साम्राज्य में कोई रूपांतरण माने तो इस सृष्टि में उससे बढ़कर कोई पाप नहीं हो सकता किन्तु यदि तुम रूपांतरण पर उसकी यथास्थिति में विचार करो और उसी के अनुरूप उसे समझो तो यह तुम्हारे लिए दोषपूर्ण बात नहीं होगी।

88. मेरे प्रभु की सौगन्ध, यद्यपि हमने तुम्हारे समक्ष वाणी के रहस्यों और मीमांसा के स्तरों को खोलकर रख दिया है परन्तु मुझे लगता है कि ईश्वर के निगूढ़ ज्ञान के महासागर और उसके अपरीक्षेय विवेक के सारतत्व में से मैंने एक अक्षर भी नहीं उचारा है। ईश्वर की इच्छा होगी तो हम शीघ्र ही किसी निर्धारित बेला में यह कार्य पूरा करेंगे। वह वास्तव में हर वस्तु को यथास्थान याद रखता है और हम सब सत्य ही उसकी स्तुति करते हैं।

89. और तू यह भी जान कि उच्च परिधियों के वातावरण में उड़ान भरने वाला पक्षी कभी भी परम् पावनता के आकाश में उड्डयन नहीं कर पाएगा, न ही वह ईश्वर द्वारा वहाँ प्रदत्त फलों का स्वाद ही चख सकेगा और न उन निर्झरों का जल छक सकेगा जिसे परमात्मा ने उस स्वर्ग के मध्य में प्रवाहित किया है और यदि वह उसकी एक बूँद भी ग्रहण कर पाता तो वह तुरन्त ही विनष्ट हो जाता। इस दिवस में भी तुम उन लोगों के प्रसंग में ऐसा ही देख रहे हो जो हमारे प्रति वफादार होने का दावा करते हैं और फिर भी ऐसे कृत्यों को अंजाम देते हैं, ऐसे वचन उचारते हैं और ऐसे दावे करते हैं जैसाकि तुम देख ही रहे हो। मुझे लगता है वे अपने ही आवरण में किसी मृतक की तरह मिथ्या प्रलाप में लीन हैं।

90. इसी तरह हर पद, संकेत और संदर्भ को जिसे तू समझ सकता है उन पर उनके ही दायरे में विचार कर और हर वस्तु को उनके समुचित आलोक में ही जानने का प्रयास कर। क्योंकि इस पद - दिव्य एकता की इस नगरी - तक पहुँचने के बाद तुम्हें वे लोग मिलेंगे जिन्होंने दिव्य मार्गदर्शन की नौका में प्रवेश पा लिया है और ईश्वरीय एकता की ऊँचाइयों से होकर यात्रा की है। तुम उनके चेहरों पर सौन्दर्य की प्रभा देख सकोगे और उनके मानवीय अस्तित्व की छाया में गरिमा के रहस्य पा सकोगे। तुम कस्तूरी की सुरभि से आप्लावित उनकी वाणी समझ सकोगे और उनके हर तौर-तरीके, हर कार्य में परमात्मा की सम्प्रभुता के चिह्न देख सकोगे। तुम उन लोगों के कर्मों को देखने से भी वंचित नहीं रहोगे जो स्फटिक स्वच्छ जलधारा का पान करने से चूक गए हैं या जो पावनता की नगरी तक नहीं पहुँच सके हैं और जो अपनी स्वार्थपूर्ण लालसाओं के पीछे भागने तथा संसार में अव्यवस्था फैलाने में ही लगे हुए हैं और फिर भी वे यह विश्वास करते हैं कि उन्हें सही मार्गदर्शन प्राप्त है। वस्तुतः यह बात उन्हीं के बारे में कही गई है: "ये अधम और मूर्ख लोग हैं जो हर बड़बोले पाखंडी का अनुगमन करते हैं और हर बहती हवा के साथ बह चलते हैं।"[58] अतः, इस यात्रा, इस पद, इस परम धाम के चरण तुम्हारे सामने स्पष्ट हो चुके हैं, अब और किसी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।

91. अतः तू यह जान कि उस सत्य के दिवासूर्य, उस आदि-बिंदु को तुमने पूर्वकाल की उपाधियों में से जिस किसी का उल्लेख अपने संदर्भ में करते हुए सुना या देखा है उसका सम्बंध केवल लोगों की अक्षमता और सृष्टि के संसार की योजना से है। अन्यथा, सभी नाम और अलंकरण तो बस उसी के सारतत्व के इर्द-गिर्द घूमते हैं और उसके अभ्यारण्य के चतुर्दिक परिक्रमा करते हैं। क्योंकि वही तो सभी नामों को प्रशिक्षित करने वाला है, सभी वस्तुओं में जीवन का संचार करने वाला है, दिव्य श्लोकों का उद्घोषक तथा समस्त स्वर्गिक संकेतों का प्रणेता है। नहीं, बल्कि यदि तुम अपनी अंतर्दृष्टि से देख पाते तो तुम जान पाते कि उसके सिवा अन्य सब कुछ शून्य में विलीन हो जाने वाला है और उसकी पावन उपस्थिति में वे सब चीज़ें विस्मृत हैं। "एकमात्र ईश्वर का अस्तित्व था, उसके सिवा और कोई नहीं था। वह आज भी अक्षुण्ण है, जैसा कि वह सदैव था।" चूँकि यह तय है कि परमात्मा - पावन और महिमामय है! वह अकेला ही विद्यमान था और उसके सिवा और कोई नहीं था तो फिर परिवर्तन और रूपांतरण का नियम कैसे लागू हो सकता है ? यदि तू मेरे द्वारा प्रकट की गई बातों पर मनन् करे तो इस अनन्त प्रभात में मार्गदर्शन का दिवानक्षत्र तुझ पर देदीप्यमान होकर अपनी प्रभा बिखेरेगा और तेरी गणना पावन आत्माओं में की जाएगी।

92. और तू यह भी जान ले कि इन यात्राओं के सम्बंध में हमने जिन-जिन बातों का उल्लेख किया है, वे किसी और के लिए नहीं बल्कि चुने हुए सदाचारी लोगों के लिए हैं। और यदि तू चेतना के अश्व पर सवार होकर स्वर्ग की शस्य भूमियों से होकर गुज़रे तो तू पलक झपकने भर की देर में इन यात्राओं को पूरा कर लेगा और सभी रहस्यों को जान जाएगा।

93. हे मेरे बन्धु! यदि तुझे इस रणभूमि का योद्धा बनना हो तो तू निश्चय के मैदानों से होकर तेजी से गुज़र, ताकि तेरी आत्मा इस युग में अविश्वास के बंधन से मुक्त की जा सके और तू इस उपवन से प्रवाहित होने वाली मोहक सुरभि को पा सके। वस्तुतः, इस नगरी के सुवास से भरी सुगंधित हवाएँ सभी क्षेत्रों से होकर प्रवाहित होती हैं। अतः तू अपना अंश न त्याग और असावधानों में से न बन। क्या ही अच्छा कहा गया है:

94. पूर्व के स्थलों की ओर प्रवाहित

उसकी सुमधुर हवाएँ

पश्चिम के अस्वस्थ जनों को भी

सुगंधित बनाएँ।[59]

95. इस स्वर्गिक यात्रा और रहस्यमय उन्नयन के बाद मुसाफिर आश्चर्य की वाटिका में प्रवेश करेगा। यदि मैं तुझे इस महान पद की वास्तविकता के बारे में बता दूँ तो तू इस 'सेवक' की दशा पर रोएगा, विलाप करेगा उस पर जो इन विश्वासघातियों के चंगुल में फँसा है, जो अपनी दुर्दशा से हैरान और अथाह वेदना के सागर में निमग्न है। वे हर रोज मुझे मौत के मुँह में डालने का षडयंत्र रचते हैं और हर घड़ी मुझे इस जगह से निकाल बाहर करने को प्रयत्नशील हैं, जैसा कि उन्होंने कई स्थानों से मुझे निर्वासित किया था। सर्वशक्तिमान प्रभु ने हमारे लिए जो भी निर्धारित और आदेशित किया है उसकी प्रतीक्षा करते हुए, यह सेवक उनके समक्ष तत्पर खड़ा है। भले ही हम दुष्टजनों और कलुषित हृदय वाले लोगों द्वारा दी जाने वाली यातनाओं और परीक्षाओं तथा अनेक दुःखों और मुसीबतों से घिरे हों, फिर भी हमें किसी का डर नहीं। "नोआ का सैलाब बस एक पैमाना है मेरे आँसुओं का और इब्राहिम की आग प्रदाह है मेरी आत्मा का। याकूब की पीड़ाएँ मेरे दुःखों की प्रतिछाया है और जॉब के कष्ट मेरे संकटों का एक अंश।"[60]

96. यदि मैं तुम्हारे समक्ष उन घोर संकटों का वर्णन करने लगूँ जो मेरे ऊपर आ पड़े हैं तो तुम इतने व्यथित हो उठोगे कि हर वस्तु का उल्लेख भूल जाओगे और स्वयं अपना तथा ईश्वर द्वारा धरती पर रचित हर वस्तु का विस्मरण हो जाएगा। परन्तु यह मेरी मंशा नहीं है अतः मैंने दिव्य आज्ञा के प्राकट्य को बहा के हृदय में ही प्रच्छन्न कर रखा है तथा इसे सृष्टि की परिधि में विचरने वाले हर व्यक्ति की नज़रों से छुपा रखा है ताकि यह तब तक अदृश्य के वितान तले छुपा रहे जब तक कि स्वयं परमात्मा इसके रहस्य को प्रकट न कर दें। "आकाश तथा धरती पर कुछ भी उसके ज्ञान से बचकर नहीं जा सकता और वह वास्तव में सब चीजों का ज्ञाता है।"[61]

97. चूँकि हम अपनी विषय-वस्तु से दूर चले आए हैं अतः अब हम इन संदर्भों को यहीं छोड़कर इस नगरी के बारे में अपनी चर्चा पर वापस लौटें। वस्तुतः, जो कोई भी उसमें प्रवेश को प्राप्त होगा वह सुरक्षित रहेगा और जो कोई भी उससे विमुख होगा वह सचमुच नष्ट हो जाएगा।

98. हे तू जिसका उल्लेख इन पातियों में हुआ है! यह जान कि जो कोई भी इस यात्रा पर चल पड़ेगा वह ईश्वर की शक्ति के चिह्नों तथा उसकी कृतियों की विलक्षणता के

प्रमाणों को देखकर विस्मित-विमुग्ध हो उठेगा। उसे चारों ओर से कौतूहल घेर उठेंगे, जैसाकि स्वर्ग के प्रांगण से उस अमरता के सारतत्व ने सम्पुष्ट किया है: ''हे परमेश्वर! अपने प्रति मेरा आश्चर्य और कौतूहल बढ़ा।''[62] तभी तो कहा गया है:

99. विस्मय किसको कहते हैं

यह तब तक जान न पाया था,

जब तक तेरे प्रेम को

अपना कारण न बना पाया था।

यह कितना आश्चर्यजनक होता,

यदि मैं तुझसे आश्चर्यचकित न होता![63]

100. इस घाटी में, अपने अन्तिम गंतव्य तक पहुँचने से पूर्व मुसाफिर भटकता और विनष्ट होता है। हे भगवान! इतनी अपरिमेय है यह घाटी, इतनी विशाल है यह नगरी कि सृष्टि के साम्राज्य में इसका न तो आदि का पता चलता है और न अंत का। कैसा सौभाग्य है उसका जो इस यात्रा को पूरा करता है और जो परमात्मा की सहायता से इस दिव्य नगरी की पावन माटी से होकर गुज़रता है - उस नगरी से होकर जिसमें ईश्वर के कृपापात्र जन और पवित्र हृदय के लोग आश्चर्य और विस्मय से भर उठते हैं और हम कहते हैं: ''स्तुति हो परमामा की, सर्वलोकों के स्वामी की! ''

101. और यदि सेवक इससे भी उच्चतर स्थितियों तक उड़ान भर सके, धूल के इस नश्वर संसार को त्यागकर दिव्य आवास की ओर उड़ जाना चाहे, तो वह इस नगरी से गुजरते हुए 'परम शून्यता' की नगरी में प्रवेश करेगा - अर्थात उस स्थान को, जहाँ वह अपने प्रति मृत और केवल परमात्मा में जीवित रहेगा। इस महान पद, इस परम्धाम को पाने के बाद, परिपूर्ण आत्मविरक्ति की इस यात्रा में, पथिक स्वयं अपनी आत्मा, अपनी चेतना, अपने शरीर और अस्तित्व मात्र को ही भूल जाता है, स्वयं को अस्तित्वहीनता के महासागर में निमग्न कर लेता है और धरती पर ऐसे विचरता है मानों वह उल्लेख के योग्य ही न हो और किसी को भी उसके अस्तित्व की कोई निशानी भी न मिलेगी क्योंकि वह दृश्य धरातल से ओझल हो चुका है और आत्म अस्वीकृति की उदात्तता को छू चुका होता है।

102. यदि हम इस नगरी के रहस्यों का वर्णन करते तो इस महान पद को पाने की अदम्य उत्कंठा में लोगों के हृदय-साम्राज्य लालायित हो उठते, क्योंकि यह वह महान अवस्था है जिसमें परम प्रियतम की देदीप्यमान गरिमा सच्चे प्रेमी के लिए प्रकट कर दी जाती है तथा उस परम मित्र के ज्योतिर्मय प्रकाश उसके प्रति समर्पित विरागी हृदयों पर बिखेर दिए जाते हैं।

103. एक बार उस ज्योतिर्मय गरिमा के दर्शन कर लेने के बाद सच्चा प्रेमी भला कैसे जीवित रह सकता है ? एक बार जब सूर्य चमक उठे तो भला छाँह की बिसात कहाँ! अपनी आराधना के परम ध्येय को पाने के बाद कोई श्रद्धालु हृदय उसके समक्ष अपने अस्तित्व को कैसे याद रख सकता है ? नहीं, सौगन्ध उसकी जिसके हाथों में मेरी आत्मा है! इस पद को पाने के बाद, अपनी सृष्टि के समक्ष साधक की समर्पण भावना और आत्मविरक्ति इतनी प्रबल होगी कि यदि वह पूरब से पश्चिम तक की खाक छान मारे और स्थलों, समुद्रों, पर्वतों और मैदानों को पार कर ले तो भी उसे अपनी आत्मा तथा अन्य किसी भी आत्मा का नामोनिशान नहीं मिलेगा।

104. धन्य हो, प्रभो! किन्तु नमरूद के अत्याचार के डर से मुक्त होकर तथा न्यायप्रिय इब्राहिम के संरक्षण हेतु, मैं तुम्हारे समक्ष वह प्रकट करूँगा जो तुझे हर वस्तु से मुक्त होने और इस नगरी के निकट आने में सक्षम बना देगा, बशर्ते कि तुम स्वार्थ और लालसाओं को त्याग सको। मगर तुम तब तक धैर्य रखो जब तक ईश्वर अपने धर्म की घोषणा न कर चुके हों। "वह निस्संदेह उन्हें अपरिमेय रूप से पुरस्कृत करता है जो धैर्यपूर्वक सब सहते हैं।"[64] अतः निगूढ़ अर्थों के परिधान से चेतना की मोहक सुरभि का आस्वाद ग्रहण कर और बोल: "हे निःस्वार्थता के महासिन्धु में निमज्जित जन! अमरता की नगरी में प्रवेश के लिए शीघ्रता कर, बशर्ते कि तू इसकी ऊँचाइयों को छूना चाहे।" और हम कहते हैं: "वस्तुतः, हम ईश्वर के हैं और उसी की ओर लौट जाएँगे।"[65]

105. इस परम भव्य, उच्च अवस्था के बाद और इस अति उदात्त भव्य धरातल से आगे, साधक अमरता की नगरी में कदम रखता है, सदासर्वदा वहीं निवास करने के लिए। इस स्थान पर पहुँचकर वह स्वयं को स्वतंत्रता के सिंहासन और महानता के आसन पर विराजमान देखता है। तब कहीं जाकर वह अतीतकाल में उस दिन के बारे में प्रकट किए गए कथन का अर्थ समझ पाएगा: "जब ईश्वर अपनी विपुलता से हर

वस्तु को समृद्ध बना देगा।"[66] धन्य हैं वे जो इस पद को प्राप्त कर पाए हैं और जिन्होंने 'रक्ताभ स्तम्भ' के सामने इस हिमधवल प्याले से छककर अपना अंशभाग ग्रहण किया है।

106. इस यात्रा में, स्वयं को अमरता के महासिन्धु में प्रवाहित करके, परमेश्वर के सिवा अन्य सब कुछ से अपने हृदय को अनासक्त बना कर तथा अनन्त जीवन के उच्चतम शिखरों को छूने के बाद, उस साधक को स्वयं अपने लिए या किसी भी अन्य आत्मा के लिए कोई विनाश नहीं दिखेगा। वह अमरता के प्याले से छककर पियेगा, अमर्त्य भूमि पर चलेगा, उसके वायुमंडल में उड़ान भरेगा, उन लोगों का सहचर होगा जो उस लोक के मूर्तिमान स्वरूप हैं, अनन्तता के वृक्ष के अविनाशी एवं अविकारी फलों का आस्वादन ग्रहण करेगा और सदासर्वदा के लिए अमरता के उच्चतम धरातलों पर अनन्त साम्राज्य के निवासियों में गिना जाएगा।

107. इस नगरी में जिस किसी भी वस्तु का अस्तित्व है, वह वस्तुतः स्थायी होगा और वह कभी नष्ट नहीं होगा। यदि परमेश्वर की कृपा से तू इस उदात्त और परमोच्च उद्यान में प्रवेश पा सके तो तुम्हें मध्याह्न की गरिमा में प्रदीप्त कभी न ढलने वाला और कभी भी किसी ग्रहण से आक्रान्त न होने वाला, इसका सूर्य दिखेगा। यही सत्य इसके चन्द्रमा पर भी लागू होता है और इसके आकाश, इसके तारों, इसके महासागरों और इसकी अस्तित्व-सीमा में विद्यमान हर वस्तु पर। सौगन्ध उसकी जिसके सिवा अन्य कोई ईश्वर नहीं है! यदि मैं आज के दिन से लेकर उस अन्त तक जिसका कोई अन्त नहीं है इसकी विलक्षण विशेषताओं का वर्णन करने लगूँ तो भी इस पावन और अनन्त नगरी के लिए मेरे मन में जो प्रेम बसा हुआ है वह कभी समाप्त नहीं होगा। परन्तु मैं अपने विषय का समापन करूँगा क्योंकि समय कम है और जिज्ञासु है अधीर, और ये रहस्य की बातें सर्वशक्तिमान, सर्वबाध्यकारी ईश्वर की आज्ञा के बिना खुले तौर पर प्रकट करने योग्य नहीं हैं।

108. बहुत ही जल्द, बाद के पुनरुत्थान के दिवस में, निष्ठावान लोग उसे देखेंगे जिसे ईश्वर प्रकट करेगा, जो अदृश्य के आकाश से इस नगरी को लेकर अवतरित होगा, अपने वरेण्य एवं चयनित देवदूतों के साथ। अतः परम धन्य है वह जो उसकी उपस्थिति में रह सकेगा और उसकी मुखमुद्रा निहार सकेगा। हम सब, सत्य ही, यह

आशा सँजोए बैठे हैं और कहते हैं: ‘‘स्तुति हो उसकी, क्योंकि वस्तुतः वही है अनन्त सत्य और उसी के पास लौट जाते हैं हम सब! ’’

109. और तू यह भी जान ले कि वह व्यक्ति जिसने इन महान पदों को पा लिया है और जो इन यात्राओं पर चल पड़ा है, यदि वह दर्प और मिथ्याभिमान का शिकार हो जाए तो वह उसी क्षण शून्य पर पहुँच जाएगा और अनजाने ही प्रथम सोपान पर पहुँच जाएगा। वस्तुतः, इन यात्राओं में जो कोई भी परमात्मा के प्रति उत्कंठा से भरे हैं और उसे पाना चाहते हैं, वे इन्हीं संकेतों से पहचाने जाते हैं, कि वे विनम्रतापूर्वक उन लोगों का अनुगमन करते हैं जिन्होंने ईश्वर और उसके श्लोकों में विश्वास किया है, कि वे उन लोगों के समक्ष अवनत होते हैं जो परमात्मा और उसके सौन्दर्य के प्रकटावतारों की ओर आकर्षित हैं और वे समर्पण भाव से उन लोगों के समक्ष झुकते हैं जो ईश्वर के धर्म की उत्तुंग ऊँचाइयों पर और इसकी भव्यता के सम्मुख दृढ़तापूर्वक खड़े हैं।

110. क्योंकि ईश्वर की खोज रूपी अपने अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचने के लिए उन्हें उस आवास तक पहुँचना होता है जिसका निर्माण उनके अपने ही अंतस्थल में किया गया था। तब फिर वे ऐसे साम्राज्यों तक ऊपर उठ सकने की अभिलाषा भला कैसे कर सकते थे जो उनके लिए निर्धारित ही नहीं हैं या जिन्हें उनके पद के लिए निर्मित ही नहीं किया गया है ? नहीं, यदि वे अनन्त-से-अनन्त तक की यात्रा करते चले जाएँ तो भी वे उस तक नहीं पहुँच सकेंगे जो अस्तित्व का हृदय-स्थल है तथा समस्त सृष्टि का मेरूदण्ड, वह जिसकी दाहिनी भुजा पर गरिमा का सागर हिलोरें मारता है, जिसकी बाईं ओर सामर्थ्य की नदियाँ कलरव करती हैं और जिसके दरबार में भी पहुँचने की कोई आशा नहीं कर सकता, तो फिर उसके आवास तक पहुँचने का सवाल ही कहाँ है! क्योंकि वह अग्नि की नौका में निवास करता है, आग के महासिंधु से होते हुए, अग्नि की परिधि में ही गमन करता है और अग्नि के वायुमंडल में ही गतिशील है। वह जो कि विरोधी तत्वों से बना हुआ है, इस अग्नि में या उसके निकट भी कैसे पहुँच सकता है ? यदि वह ऐसा करेगा तो तुरन्त ही जलकर भस्म हो जाएगा।

111. और यह भी जान ले कि धरती और आकाश के निवासियों की शक्तिशाली धुरी को परस्पर जोड़ने वाला यह सूत्र यदि तोड़ दिया जाए तो वास्तव में वे सब के सब विनष्ट हो जाएँगे। धन्य है परमात्मा! अधमता के रसातल में पड़ी धूल भला उस

स्वामियों के स्वामी तक कैसे पहुँच सकती है ? लोग ईश्वर के बारे में जो कुछ भी कहते हैं उन सबसे परे, अपरिमेय रूप से महान है ईश्वर।

112. तब वह साधक उस पद को प्राप्त करता है जहाँ उसके लिए असीम कृपाएँ निर्धारित की गई हैं। उसके हृदय में प्रेम की ऐसी अग्नि सुलगती है कि उसका अपने आप पर कोई वश ही नहीं चलता। कदम-कदम पर अपने स्वामी के लिए उसका प्रेम बढ़ता चला जाता है, और वह अपने सृष्टिकर्ता के निकट से निकट खिंचा चला आता है - कुछ इस कदर कि यदि उसका प्रभु सामीप्य की पूर्व दिशा में हो और वह स्वयं सुदूरता के पश्चिम में निवास कर रहा हो और यदि उसके पास धरती और आकाश के समस्त नीलम और स्वर्ण की निधियाँ पड़ी हों तो भी वह उन सबका परित्याग कर देगा और अपने इष्ट की नगरी की ओर चल देगा। और यदि उसकी ऐसी स्थिति न हो तो उसे मिथ्यावादी पाखंडी मात्र समझना। हम सब, सत्य ही, उससे सम्बंधित हैं जिसे बाद के पुनरुत्थान के दिवस में ईश्वर प्रकट करेगा और उसी के माध्यम से हम पुनः जीवन के संचरण से भर उठेंगे।

113. किन्तु इन दिवसों में, चूँकि हमने प्रभुधर्म की मुखमुद्रा को आवृत्त करने वाले आवरणों को नहीं हटाया है और न ही हमने लोगों के समक्ष इन महान पदों के परिणाम ही प्रकट किए हैं जिनका वर्णन करना हमारे लिए मना है, अतः तुम उन्हें असावधानी के नशे में उन्मत्त देखते हो। अन्यथा, यदि इस परम् पद की गरिमा के बारे में लोगों को रंच मात्र भी बता दिया जाता तो तुम देखते कि कैसे वे दिव्य करुणा के चतुर्दिक एकत्रित हो रहे हैं तथा चहुँ ओर से ईश्वरीय गरिमा के साम्राज्य में निकटता के दरबार की ओर तेजी से अग्रसर हो रहे हैं ? परन्तु जैसा कि हमने ऊपर कहा है, हमने इसे छिपा रखा है ताकि आस्थावानों और निष्ठाहीनों के बीच का अन्तर स्पष्ट हो सके तथा वे जो ईश्वर की ओर अभिमुख हैं उन्हें ईश्वर से विमुख लोगों से अलग पहचाना जा सके। मैं सत्य ही यह घोषणा करता हूँ: “ईश्वर के सिवा अन्य किसी में भी शक्ति और क्षमता नहीं है। वही है संकटों में सहायक, स्वयंजीवी।”

114. और तब इस स्थान के बाद, पथिक अनाम और अवर्णनीय नगरी में पहुँचता है, जहाँ न कोई आवाज है न कोई उल्लेख। वहाँ अनन्तता का महासागर हिलोरें मारता है, और यह नगरी स्वयं ही अनन्तता के आसन के चतुर्दिक परिक्रमा करती है। वहाँ अदृश्य का सूर्य अदृश्य के क्षितिज पर प्रखर रूप से प्रभाषित है - एक ऐसा सूर्य

जिसके अपने आकाश और अपने चन्द्र हैं जो इससे अपना प्रकाश ग्रहण करता है और जो अदृश्य के सागर से उगता और वहीं डूबता है। और उस नगरी के लिए जो निर्धारित किया गया है, मैं उसके एक ओसकण के बराबर भी प्रदान करने की आशा नहीं कर सकता क्योंकि उसके सृजक, उसके स्वरूपदाता, परमेश्वर और उसके प्रकटावतारों के सिवा और कोई भी उसके रहस्यों से परिचित नहीं है।

115. और तू यह भी जान कि जब हमने इन शब्दों को प्रकट करने का कार्य हाथ में लिया और उनमें से कुछ को लिपिबद्ध किया तो हमारा इरादा यह था कि हम तुम्हारे लिए ईश्वर के आशीर्वादित एवं कृपा प्राप्त व्यक्ति के लिए, समीचीन वाणी में उन समस्त बातों को स्पष्ट कर दें जिनका उल्लेख पहले हमने धर्मावतारों के शब्दों और प्रभु के संदेशवाहकों की शब्दावली में किया था। परन्तु समय का अभाव था और तुम्हारा पत्रवाहक शीघ्रता में था और वापस लौटने को उतावला। इसलिए हमने अपने व्याख्यान को संक्षिप्त रखा और इन चरणों के बारे में उपयुक्त तरीके से विवरण दिए बिना ही इतने ही से संतोष कर लिया। सच तो यह है कि हमने प्रमुख नगरों और शक्तिशाली यात्राओं का वर्णन तो किया ही नहीं। पत्रवाहक इतनी शीघ्रता में था कि हमने यात्रा के दो उदात्त चरणों - समर्पण और संतोष - का तो उल्लेख ही त्याग दिया।

116. परन्तु यदि तुम इन संक्षिप्त कथनों पर भी गौर करोगे तो तुम्हें वस्तुतः हर ज्ञान प्राप्त होगा, तुम प्रत्येक ज्ञान के परम ध्येय तक पहुँच सकोगे और यह कह उठोगे: “वस्तुतः ये शब्द समस्त सृष्टि के लिए पर्याप्त हैं - दृश्य और अदृश्य दोनों के लिए!”

117. और तब भी, यदि तुम्हारी आत्मा में प्रेम की अग्नि प्रज्वलित हो उठे तो तुम पूछ उठोगे: “क्या अभी भी कुछ और है? ”[67] और हम कहेंगे:

“ईश्वर की स्तुति हो, वह जो स्वामी है समस्त लोकों का!”

टिप्पणियाँ

1. शोगी एफेन्दी, गॉड पासेस बाइ, (विल्मेटः बहाई पब्लिशिंग ट्रस्ट, 1974), पृष्ठ 110
2. बहाउल्लाह, किताब-ए-इकान, (विल्मेटः बहाई पब्लिशिंग ट्रस्ट, 1994), पृष्ठ 26
3. कुरान 67: 3
4. कुरान 24:35
5. मैथ्यू. 24:19
6. मैथ्यू 24:29-31
7. मार्क 13:19
8. ल्यूके 21:25-28
9. जॉन 15:26-27
10. जॉन 14:26
11. जॉन 16:5-6
12. जॉन 16-7
13. जॉन 16-13
14. शिया इस्लाम के इमाम
15. ईसा मसीह
16. मैथ्यू, 24:35, मार्क 13:31, ल्यूक, 21:33
17. ईशविरोधी, जिसके बारे में यह मान्यता थी कि वह प्रतिज्ञापित अवतार के आगमन पर सामने आएगा और अन्ततः उनके हाथों परास्त होगा।
18. एक अन्य व्यक्ति जिसके बारे में माना गया था कि वह प्रतिज्ञापित अवतार के

आगमन पर मक्का और दमिश्क के बीच विद्रोह का परचम फहराएगा।

19. कुरान 16:43

20. प्रभुदूत मूसा के समय में फराओ के दरबार में रहने वाला एक जादूगर

21. कुरान 83:6, 2:89

22. शिया इस्लाम के इमाम

23. कुरान 29:2

24. कुरान 2:156

25. कुरान 29:69

26 कुरान 2:282

27. एक हदीस में से

28. उपरोक्त

29. कुरान 30:30

30. कुरान 48:23

31. कुरान 67:3

32. कुरान 17:110

33. कुरान 57:3

34. बारहवें इमाम, मुहम्मद-अल-मेहदी, हसन-अल-अस्करी के पुत्र

35. शिया परम्पराओं के अनुसार, जाबुल्का और जाबुल्सा नामक दो शहर छिपे हुए इमाम (प्रतिज्ञापित अवतार) के निवास-स्थल हैं, जहाँ से वे कयामत के दिन प्रकट होंगे।

36. मुहम्मद

37. कुरान 33:40

38. कुरान 13:2

39. कुरान 74:50

40. कुरान 13:5

41. कुरान 11:7

42. कुरान 3:185

43. कुरान 16:97

44. कुरान 3:169

45. एक हदीस में से

46. कुरान 7:179

47. कुरान 9:109, 3:103

48. कुरान 6:122

49. जॉन 3:5-7

50. रेवलेशंस 1:14-16, 2:18, 19:15

51. कुरान 80:41, 83:24

52. कुरान 11:112

53. ल्यूके 12:53

54. कुरान 1:4

55. कुरान 14:48

56. कुरान 14:5

57. कुरान 21:23

58. इमाम अली की एक उक्ति

59. इब्न-ए-फरीद की पुस्तक दीवान से

60. उपरोक्त

61. कुरान 10:61, 34:3

62. एक हदीस में से

63. इब्न-ए-फरीद की पुस्तक दीवान से

64. कुरान 39:10

65. कुरान 2:156

66. कुरान 4:130

67. कुरान 50:30